अनुवादक के दो शब्द

सर्व प्रथम सन् १९४१ ई० में श्री देवधर जी की 'सरंजाम परिचय' नामक पुस्तक पढ़ने को मिली। यद्यपि पुस्तक मराठी भाषा में लिखी थी तथापि महाराष्ट्री भाइयों के सहवास में रहते हुए मराठी भाषा सीखने और बोलने की जो प्रबल इच्छा रही, उसी के फलस्वरूप मैंने इसे प्रेमपूर्वक आद्योपान्त पढ़ लिया और कुछ मनन भी किया। पुस्तक की उपयोगिता देख कर मुझे स्वभावतः यह इच्छा हुई कि यदि यह पुस्तक हिन्दी में भी छप जाय तो अधिक लोगों को इससे लाभ हो सकता है। बस, क्या था? यही इच्छा बलवती हो इसके अनुवाद का कारण बनी।

यद्यपि मैंने इसका अनुवाद करना उसी समय प्रारम्भ कर दिया था परन्तु कुछ अन्य तथा मुख्यतः अगस्त १९४२ के आन्दोलन में जेल यात्रा की वजह से इसे पूरा न कर सका। जेल से वापस आने पर बिहार प्रान्त के खादी विद्यालय सिमरी (दरभंगा) में रहने का अवसर मिला तो इसे पूरा कर पाठकगण की सेवा के योग्य बनाने में बड़ी सहायता मिली।

मन में सर्वदा इस अनाधिकार चेष्टा पर भय बना रहता है कि कहाँ मेरा मराठी भाषा का यह तुच्छ ज्ञान और कहाँ

अनुवाद का यह गुरुतर कार्य ! एक भाषा के भावों को दूसरी भाषा में तद्रूप बदल देने का कार्य वही कौशल-पूर्वक कर सकते हैं जो दोनों भाषाओं के पंडित हों। परन्तु मैंने, दो में से एक का भी ज्ञाता या पंडित न होते हुए भी, इसका हिन्दी में अनुवाद करने की धृष्टता की है। सम्भव है अनेक जगहों पर मैं ठीक २ भावों को प्रदर्शित करने में असमर्थ पाया जाऊँ। ऐसे स्थानों पर पाठक वृन्द भाषा की शुद्धता अशुद्धता पर ध्यान न देकर भावों से ही काम चला लेने का कष्ट करें तो बड़ी कृपा होगी।

अनुवाद करते समय मैंने बराबर यह ध्यान रखा है कि सर्व साधारण के समझने योग्य शब्दों का ही उपयोग करूं। हाँ, कुछ पारिभाषिक शब्द जो स्थान विशेष में ही प्रचलित हैं शायद सर्वसाधारण को समझ मे न आयें। परन्तु ऐसी पुस्तकों में ऐसे विशेष शब्दों का आना तो अनिवार्य ही है। जहाँ तक हो सका है पारिभाषिक शब्दों को मैंने 'निवन्ध लेख संग्रह' मे लिखित हिन्दी के शब्दों को ही लेने की कोशिश की है। कुछ शब्द ऐसे भी लिए हैं जो एक ही स्थान में प्रचलित हैं, परन्तु अधिक भाव व्यंजक होने से अन्यत्र के लिए भी आवश्यक जान पड़े हैं। भावानुवाद का ध्यान रखते हुए भी कहीं २ शब्दानुवाद ही करना पड़ा है। पाठक गण कृपया इसे क्षमा करेंगे।

मैं उन सज्जनो के सम्बन्ध में दो शब्द कह देना अनुचित

नहीं समझता जिन्होंने इस कार्य को पूरा करने में सर्वदा अपना वरदहस्त मेरी पीठ पर रखा। आदरणीय श्री देवधर जी (मूल लेखक) के लिए जो कुछ लिखें थोड़ा है जिन्होंने इसके अनुवाद की स्वीकृति देकर आभारी किया। परमादरणीय श्री माताप्रसादधर द्विवेदी, व्यवस्थापक खादी विद्यालय सिमरी (दरभंगा) को भी धन्यवाद दिये बिना नहीं रहा जाता जिन्होंने अपना अमूल्य समय और सहयोग देकर उसे सफल बनाने में हाथ बटाया। अन्त में पूज्य बाबू लक्ष्मी नारायण जी, मंत्री, अ० भा० च० संघ विहार शाखा का भी कोटिशः आभार मानता हूं जिन्होंने कागज की इस महँगी के जमाने में भी इसे प्रकाशित करने का सारा भार उठा कर मुझे कृतकार्य बनाया है। यह कहा जाय कि इस पुस्तक के आपलोगों के हाथ में पहुंचने का सारा श्रेय पूज्य लक्ष्मी बाबू को है तो कोई अत्युक्ति न होगी।

सिमरी
२५-४-४५ ई०

रामनरेश सिंह

प्रस्तावना

खादी शास्त्र का अभ्यास करनेवालों के लिए, खादी कार्य में जो साधन उपयोग में लाये जाते हैं, उनकी जानकारी प्राप्त करानेवाली एक छोटी सी पुस्तक की आवश्यकता थी। खादी विद्यालय में शिक्षण प्राप्त करनेवाले विद्यार्थियों को भी इस प्रकार की पाठमाला की आवश्यकता जान पड़ी। इस कमी की पूर्ति करने के उद्देश्य से कपास का बीज निकालने से लेकर सूत कातने तक की क्रियाओं से लगनेवाले औजारों की जानकारी यहाँ देने का प्रयत्न किया गया है। और इसीलिए इस पुस्तक का नाम "सरंजाम परिचय" रखा गया है।

प्रमुख औजारों की आवश्यकता, उनका उपयोग, उनके आकार व प्रकार वगैरह के बारे में विचार करते हुए इसमें उन के आन्तरिक भागों का भी विवरण दिया गया है। उन उन साधनों में रह जानेवाले दोषों का दिग्दर्शन कराते हुए उन्हें अच्छी अवस्था में रखने के लिए क्या २ करना पड़ता है इसकी भी जानकारी इसमें दी गई है।

साधनों का विचार करते हुए प्रसंगानुसार उन पर होनेवाली क्रिया का भी किसी २ स्थान पर निर्देश किया गया है। इसी प्रकार से कुछ पाठों में 'सरंजाम' का अथवा उसका भीतरी

विवरक न होते हुए भी इन्हें यहाँ स्थान दिया गया है। 'कंप व स्वगति' 'चर्खे में तकुए का योग्य स्थान' 'तकुए का फेरा' इत्यादि पाठ इसी रूप में लिखे गये हैं। इन पाठों का उन उन साधनों से अति घनिष्ठ का सम्बन्ध होने से पुनरुक्ति दोष स्वीकार करते हुए भी उनका विचार किया गया है।

बालकों को उद्योग के द्वारा शिक्षा देने की दृष्टि से उन २ औजारों पर से कौन २ सी शिक्षा प्रान्त में दी जा सकेगी, इसकी कल्पना आने के लिए पाठ के अन्त में 'शिक्षकों को सूचना' दी गई है। वर्धा स्कूल के शिक्षको को इसका उपयोग हो इसे ही ध्यान में रखा गया है।

सासवड, २४ मई १९४१ —केशव देवधर

विषय-सूची

पाठ पहला

ओटनी

कपास के तन्तुओं और बीजों को अलग २ करने की क्रिया को ओटाई कहते हैं। जिस साधन के द्वारा यह कार्य होता है उसे ओटनी कहते हैं।

सूत कातने का काम जिस-प्रकार बिना साधन के हो सकता है उसी प्रकार ओटाई भी बिना साधन के हो सकती है। परन्तु यदि साधन द्वारा काम लेना हो तो उसकी नीचे लिखी ५ पद्धतियाँ हो सकती हैं:—

१—हाथ सलाई-पटरी ओटनी।
२—पाँव सलाई-पटरी ओटनी।
३—हाथ ओटनी।
४—पाँव ओटनी।
५—जिनिंग फैक्टरी में काम आनेवाली यंत्र ओटनी।

यदि कपास के तन्तुओं को उसके बीजों से अलग करना है तो तन्तुओं को दबाये रख कर बीज को आगे ढकेलना पड़ता है। बाँयें हाथ से बिनौले को मजबूत पकड़ कर दाहिने हाथ से तन्तुओं को खींच कर अलग कर सकते हैं। इस प्रकार

चिटकी से खींच कर तन्तु निकालने में विशेष प्रकार का दबाव डालना पड़ता है। गन्ने का रस निकालते समय या तिल का तेल निकालते समय भी एक प्रकार का दबाव डाला जाता है। परन्तु रस या तेल द्रव रूप हैं और बिनौले घन स्वरूप अर्थात् ठोस हैं। उनमें लम्बाई, चौड़ाई, सख्ती, गोलाई आदि होती है और उन पर छिलका होता है। उनके इस आकार का लाभ उठाकर उनको साधन द्वारा तन्तुओं से अलग करते हैं। तन्तु बारीक व लम्बे होते हैं। उनके इस गुण का उपयोग ओटाई में किया जाता है। एक पटरी पर कपास अर्थात् तन्तु सहित बिनौलों को रख कर बेलन जैसी कोई चीज लेकर यदि उसे बेलने लगें तो वह तन्तुओं को दबाता हुआ आगे बढ़ेगा और अन्त में बिनौले के पास जा कर रुक जायेगा। यदि उस समय भी हम बेलना जारी रखेंगे तो बिनौला तन्तुओं से अलग हो जायेगा। इस प्रकार के साधन को हाथ-सलाई-पटरी ओटनी कहते हैं।

इस काम के लिए मामूली किसी पटरी या सलाई से काम नहीं चलेगा। साधन ऐसा होना चाहिए जो बिनौले से तन्तुओं को खींच कर अलग कर सके। इस लिए—

१–सलाई या पटरी पर गढ़े या चढ़ाव उतार नहीं होना चाहिए। क्योंकि जो तन्तु खाँचों में घुस जायेंगे उन पर सलाई व पटरी का दबाव नहीं पड़ेगा और बिना दबाव के तन्तु बिनौलों से अलग नहीं होंगे।

२—पटरी बिलकुल चिकनी नहीं होनी चाहिए। कुछ खुरदुरी होनी चाहिए। चिकनी पटरी पर से बिनौले, रुई आदि सब फिसलते रहते हैं।

३—पटरी इस प्रकार बनानी चाहिए कि उसके तन्तु आड़े रहें। लकड़ी के तन्तु आड़े रहने से सलाई से तन्तुओं पर पूरा दबाव पड़ते हुए वह आसानी से खराद हो सकती है।

४—पटरी के पाये लगा देने से वह डगमग नहीं करेगी।

५—सलाई भारी होने से उसका वजन पूरी तरह पड़ता है, इस लिए सलाई लकड़ी की न बना कर लोहे की बनाना अच्छा है। लकड़ी की सलाई के टूटने का भी डर रहता है।

६—सलाई का आकार बेलन जैसा होना चाहिए अर्थात् ओटने के स्थान पर मोटी और पकड़ने के स्थान पर पतली।

७—सलाई पर बारीक खाँचे बना देने से काम ठीक होगा। खाँचे मोटे होने से बिनौले के दब कर टूटने की सम्भावना रहती है।

पटरी पर तन्तु सहित बिनौले को रख कर उस पर सलाई रख कर तन्तु को दबाना और उसको इस प्रकार आगे ढकेलना कि तन्तु जहाँ के तहाँ रहें और बिनौला आगे चलता जाय। यह क्रिया हाथों से की जाती है इसलिए इस पद्धति को हाथ-सलाई-पटरी ओटन पद्धति कहते हैं। यदि यह काम पांव से किया जाय तो उसे पांव-पटरी-सलाई ओटन पद्धति

कहेंगे। पांव से यह कार्य करते समय कारीगर एक मांची पर बैठता है। पटरी और सलाई को नीचे पाँव के पास रखता है और पैर के दोनों तलवे सलाई के दोनों तरफ रख कर इसको पटरी पर आगे पीछे ढकेलता रहता है। तलवे दर्द करने लगते हैं इसलिए खड़ाऊँ जैसी लकड़ी की पटरियाँ पहनी जाती हैं। कारीगर सलाई आगे पीछे हटाते समय झुक कर एक हाथ से तन्तु सहित बिनौले रखता जाता है और दूसरे हाथ से तन्तु खींचता जाता है। इस पद्धति से काम जल्दी होता है। देहातों में यह पद्धति दिखाई पड़ती है। इस पद्धति में पटरी की जगह पत्थर भी काम में लाया जाता है। हाथ सलाई पटरी में जितनी विशेषतायें होती हैं वे सब इस पद्धति में काम आनेवाली सलाई पटरी में भी होनी चाहिए।

ऊपर की दोनों पद्धतियों में पटरी स्थिर रहती है और सलाई चलती है। इसलिए इस साधन के द्वारा एक निश्चित परिमाण में ही रूई निकाल सकना संभव होता है। यदि सलाई और पटरी दोनों ही फिरती हों तो उत्पत्ति-कार्य अधिक परिमाण में हो सकता है। इसका कारण यह है कि पटरी के स्थिर रहने पर सब काम सलाई को ही करना पड़ता है। यदि पटरी भी चलने लगे तो काम जल्दी जल्दी होने लगे। इस प्रकार का काम हाथ ओटनी से दोनों बेलनों के चलने से होता है इसका अर्थ यही समझना चाहिए मानो पटरी ने ही बेलन का रूप धारण कर लिया है।

हाथ ओटनी एक बहुत प्राचीन साधन है। वह सब जगह दिखाई पड़ती है। कपास की किस्म के अनुसार स्थान स्थान पर वह भिन्न २ रूप की पाई जाती है।

१–वह हाथ ओटनी जिसमें दोनों रूल या बेलन लकड़ी के हों और समान मोटे हों।
२–जिसमें दोनों रूल लकड़ी के हों और एक तरफ ढलवाँ उतरे हुए हो।
३–जिसमे दोनो रूल लकड़ी के हों पर एक मोटा व दूसरा पतला हो।
४–जिसमें एक रूल लकड़ी का व दूसरा लोहे का हो (लोहे का पतला रहता है)।
५–बारीक लोहे का रूल (कणा) समान गोलाई का हो।
६–कणें लम्बाई में कोणाकृति हों।
७–कणा खाँचदार हो।
८–कणें पर की लम्बाई पर समानान्तर रेखायें पड़ी हों।

कणा और लाट (मोटा रूल) की मोटाई में बहुत से भेद दिखाई देते हैं। इनके अनुपात में भी अन्तर होता है। लाट बनवाने के लिए ऐसी लकड़ी चुननी चाहिए जो चिमड़ी और मजबूत हो और घर्षण सहन करने योग्य हो। इस काम के लिए बबूल की लकड़ी अच्छी होती है। गुजरात में 'तणछ' नामक वृक्ष की लकड़ी काम में लाई जाती है। ओटते ओटते जो लकड़ी चिकनी हो जाती है वह ठीक नहीं रहती। ओटाई

के घर्षण से जिस लकड़ी के तन्तु उठ आते हों वैसी लकड़ी अच्छी रहती है। इस दृष्टि से बबूल के बनिस्बत 'तणछ' ज्यादा अच्छी रहती है।

लाट और कणा एक दूसरे के विरुद्ध फिरते हैं इसलिए उनके एक सिरे पर पेंच बना रहता है। इस पेंच के द्वारा कणा और लाट एक दूसरे को पकड़े रहते हैं। इसलिए लाट को फिराने से कणा अपने आप फिरने लगता है। लाट कणे से मोटी होती है इसलिए इसके फिरने से कणा स्वाभाविक रूप से ही तीव्र गति से फिरता है। लाट को फिराने के लिए उस में हत्था लगाया जाता है।

कणा और लाट यदि समान मोटाई के हैं तो काम जल्दी नहीं होगा; धीरे धीरे होगा। यदि कणे पर खांचे नहीं हैं और वह गोल है तो फिसलन बढ़ेगी और काम ज्यादा नहीं होगा। रेखा, खाँचे या कोण होने से लाट व कणे के बीच तन्तु जल्दी जल्दी व पूरी तरह दबते हैं।

कणा व लाट के बीच में यदि अन्तर ज्यादा है या कणे की रेखायें, खाँचे या कोण बड़े हैं तो बिनौले के उनमें चले जाने या घुस जाने की संभावना रहती है। और बिनौला फूट जाने से तन्तु के साथ टूटा भाग भी बाहर चला जाता है। और यदि कणे व लाट का अन्तर कम है तो ओटनी भारी फिरती है।

कण ऊपर और लाट नीचे रखने का कारण यह है कि लाट मोटी होती है इसलिए उसके आधार से कपास पकड़ाने में आसानी होती है। लाट के मोटे होने से अलग होनेवाली रूई भी आसानी से नीचे खिसक जाती है।

कपास अनेक प्रकार का होता है। किसी कपास के तन्तु लम्बे और बारीक होते हैं तथा किसी के छोटे और मोटे होते हैं। इसी प्रकार किसी के तन्तु की पकड़ बिनौले पर खूब मजबूत होती है, किसी की साधारण। देव कपास के तन्तु की पकड़ तो कुछ होती ही नहीं। तन्तुओं की लम्बाई, मोटाई, छोटापन और बारीकपन व उनकी बिनौले पर की पकड़ का विचार करके ओटनी की लाट व कण की रचना की जाती है।

हाथ ओटनी में लाट को हाथ से गति दी जाती है। जिस ओटनी में पांव से गति दी जाती है उसको पॉव ओटनी कहते हैं। इस पर हाथ ओटनी की अपेक्षा काम ज्यादा होता है। साबरमती में बनी आधुनिक पॉव ओटनी में एक विशेषता यह है कि ओटते समय लाट और कण में जो अन्तर बढ़ जाता है वह अपने आपही (Automatically) कम होता जाता है।

जिनिंग फैक्टरी में ओटने का काम छुरी से होता है। एक फिरते हुए चमड़े के वाशर के बेलन से तन्तु चिपकते हैं

और खिंचते हैं। अब वे एक ख़ास अवस्थामें पहुँचते हैं या खिंच जाते हैं ठीक उसी समय ऊपर से एक छुरी आकर उनको काट देती है। बिनौले से तन्तु एक दिशा में खिंचते हैं और बिनौले से छूती हुई यह छुरी नीचे जाती है तथा उन तन्तुओं को काट देती है इस क्रिया के कारण और सीधे तनने से तन्तु अक्सर समान्तर रहते हैं।

इस प्रकार हाथ ओटनी पर ओटी हुई और यंत्र ओटनी पर ओटी हुई रुई की तन्तु-रचना में अन्तर होता है। फैक्टरी के तन्तु सीधे लम्बे फैलते हैं और उसी अवस्था में काट लिए जाते हैं। वे उसी स्थिति मे आगे ढकेल दिये जाते हैं और उनकी तह जम जाती है। कहने का मतलब यह नहीं कि हर एक तन्तु ऐसा ही होता है परन्तु तो भी अधिकांशः तन्तु ऐसे ही होते हैं। इसलिए फैक्टरी की रुई धुनने मे बड़ी सुविधा होती है। हाथ ओटनी से जो तन्तु बाहर निकलते हैं वे सीधे लम्बे नहीं होते हैं। वे टेढ़े, तिरछे, चक्करदार और दबे हुए निकलते हैं। इसलिए हाथ ओटनी की रुई धुनने में कठिनाई होती है। तन्तु-रचना भिन्न प्रकार की होने के और भी अनेक कारण हो सकते हैं।

सारांश—

१—तन्तुओं को बिनौलों से अलग करने के साधन को ओटनी कहते हैं।

२—अंगुलियों से, हाथ सलाई-पटरी ओटनी से, पांव सलाई

पटरी ओटनी से, हाथ ओटनी से, पांव ओटनी से और यंत्र ओटनी से ओटाई का काम होता है।

३—हाथ ओटनी के लकड़ी के बेलन को लाट कहते हैं और लोहे के पतले बेलन को कणा कहते हैं।

४—लाट बबूल या तंणछ की लकड़ी से बनाई जाती है। इसका कारण यह है कि ओटते समय के घर्षण से इन लकड़ियों के तन्तु उठ आते हैं।

५—कणें पर लम्बी सामानान्तर रेखायें डालने से, खाँचे बनाने से व उसे कोण आकृति का बनाने से या वैसे ही गोल रूप में लगाकर यह काम लिया जाता है।

६—लाट और कणें के एक सिरे पर पेंच बनाया जाता है।

७—लाट मोटी होती है इसलिए उसके एक फेरे मे कणें के कई फेरे होते हैं।

८—लाटको हाथ से फिराते हैं तब कणा अपने आप फिरने लगता है।

९—प्रचार में सुलभता होने की दृष्टि से और तत्काल काम लेने की दृष्टि से हाथ सलाई पटरी ओटनी काम में लाई जाती है।

१०—हाथ ओटनी सब जगह दिखाई पड़ती है।

शिक्षकों को सूचनाः—

१—लकड़ी और लोहे के गुण दोष।

२—कपास की जातियाँ।

३—लाट और कणों के पेचों का ज्ञान।

४—ओटने के स्थान का क्षेत्रफल।

५—तेल घानी, गन्ना पेरने की चरखी, चकला बेलन।

६—हाथ में जो 'लीभर' रहता है उसका ज्ञान।

पाठ दूसरा

धनुष

पौराणिक काल में धनुष योधाओं का एक अस्त्र होता था। शत्रु पर बाण फेंकने का काम धनुष से लिया जाता था। बाण को दूर फेंकने के लिए धनुष की लचक का उपयोग होता था। हम इस गुण का उपयोग धुनने में करते हैं।

धुनकी को बायें हाथ से ऊपर उठा कर धुनना पड़ता है और दायें हाथ से उस पर चोट लगानी पड़ती है। इस प्रकार बहुत देर तक धुनकी को ऊपर उठाये रहने से तकलीफ होती है। चाहे धुनकी बड़ी हो या छोटी उसे हमेशा ऊपर उठाये रहना असह्य होता है। इसलिए उसको लटका कर काम में लाने की कल्पना हुई। सिर्फ खूंटी पर एक डोरी के सहारे उसे लटका देने से तो काम नहीं चलता क्योंकि धुनते समय धुनकी को ऊपर नीचे, इधर उधर, आगे पीछे ले जाना पड़ता

है। उसकी यह हिलने-डुलने की क्रिया आसानी से हो सकने के लिए धनुष की जरूरत होती है।

२—धनुष

धनुष बांस की मजबूत कमठी से बनाया जाता है। धनुष की प्रत्यञ्चा को बीच में से पकड़ कर खींचने से मालूम होगा कि उसमें लचक है। इसी लचक का उपयोग धुनकी को ऊपर नीचे, आजू बाजू और आगे पीछे हिलाने में होता है। धनुष से जब धुनकी को बाँध कर लटका देते हैं तो वह एक खास जगह पर लटकती रहती है। यही उसका निश्चित स्थान होता है। धनुकी को चाहे किसी दिशा मे जोर से खींचें, दबावें, ढकेलें या ऊपर उठावें धनुष की मदद से वह फिर अपनी जगह पर आ जाती है। यह काम बांस की कमठी से ही होता है यह बात नहीं। रबर की मजबूत पट्टी से या फौलाद की स्प्रींग से भी यह काम लिया जा सकता है। परन्तु गाँवों की दृष्टि से बांस का धनुष ही विशेष उपयोगी है।

घर मे धनुष किस स्थान पर बाँधना चाहिए यह बात बड़े महत्व की है। ऐसे तीन मुख्य स्थान हो सकते हैं:—

१—दीवार और छत जहाँ मिलती है उस स्थान पर।

२—जहाँ धुनकी लटकती हो ठीक उसी के ऊपर।

३—दीवार और छत जहाँ मिलती है उस स्थान से काफी दूर छत पर।

धुनने वाला दीवार से ३ या ३॥ फीट दूर बैठता है। इस

लिए धुनकी दीवार से ३से३॥ फीट दूर लटकनी चाहिए। धनुष बाँधने की पहली जगह है जहाँ छत और दीवार मिलती है, दूसरी जगह है उस स्थानसे ३से३॥ फीट दूर और तीसरी जगह उस स्थान से ६से७ फीट दूर छत पर। इन तीनो मे से पहला स्थान ठीक है। उस जगह बाँधने से धुनकी अपने आप दीवार के पास जानेका प्रयत्न करती है। उसके इस स्वाभाविक प्रयत्न से हमको लाभ है। प्रत्यंचा के मध्य भाग से जो रस्सी बाँधी जाती है उसकी लम्बाई निश्चित होनी चाहिए। धुनको इस डोरी से लटकाई जाती है। धुनकी को ज़मीन से इतनी ऊँची बाँधनी चाहिए कि धुनते समय उसे हाथ से उठाना न पड़े बल्कि उसे नीचे दबा कर धुना जा सके। जमीन से ऊपर उठाकर धुनने में श्रम अधिक पड़ता है। इसलिए जब जब धुनकी उठाने की आवश्यकता हो तब २ वह धनुष की लचक के कारण अपने आप ऊपर उठ जाय ऐसा उपाय करना चाहिए। डोरी इतनी ही लम्बी रखनी चाहिए जिससे यह अनुकूलता मिलती रहे।

धनुष में पूरी लचक बनी रहे इसलिए मोटे बाँस की कमठी लेनी चाहिए। कमठी को बीच मे मोटी रख कर दोनों नोकों को तरफ पतली करते हुए उजलॉ छीलनी चाहिए। जिस से उसमें स्वाभाविक लचक आ जाय। लचक ज्यादा हो और साथ २ मजबूती भी बनी रहे इसलिए एक धनुष के नीचे दूसरा धनुष बाँधा जाता है। ऐसा करते समय एक सावधानी रखनी

२—धनुष

आवश्यक है। वह यह कि ऊपर के धनुष की प्रत्यंचा को ्न
नीचे के धनुष की कमठी को सटा कर बाँधना चाहिए; अंतर
एख कर लटकते हुए बाँधना ठीक नहीं।

धनुषके बिना भी धुनाई की जा सकती है परन्तु धुनकी
के भार से और मुठिया या गोरिले के झटके से धुननेवाले का
बायाँ हाथ थक जाता है जिसका परिणाम धुनाई पर होता है।
धुनकी चाहे छोटी हो या बड़ी उसे धनुष से लटका कर धुनने
से ही ठीक रहता है। ७०से८० नम्बर का सूत कातने के लिए
तुनाई करके धुनने की पद्धति प्रचलित है। उनमें मुठिये से
झटका देने का काम नहीं रहता और धुनकी भी धनुष जैसी
हलकी ही काम मे ली जाती है इसके लिए धनुष की आवश्य-
कता नहीं।

जिस कमठी का धनुष बनाया जाता है यदि वह बीच
में से फटी होगी तो धनुष मे लचक कम होगी। इसी प्रकार
कमठी बहुत दिनो तक झुकी हुई स्थिति में रहती है तो भी
उसकी लचक कम हो जाती है। कीड़े लगी हुई कमठी के धनुष
और गीले बाँस की कमठी के धनुष भी ठीक काम नहीं देते।

धनुष की लम्बाई ४॥ से ५ फीट तक और उसके लिए
काम में आनेवाली कमठी की चौड़ाई १॥ से २ इञ्च तक होनी
चाहिए। बाँस की मोटी कमठी लेनी चाहिए यह तो ऊप
लिखही दिया है।

सारांश:—

१—धनुष बाँस की कमठी से बनाया जाता है।

२—इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि धनुष में पूरी लचक हो और वह मजबूत हो।

३—दीवार और छत जहाँ मिलती हैं उस जगह धनुष बाँधना चाहिए।

४—पींजन (धुनकी) जमीन से इतनी ऊंची लटकनी चाहिए कि पींजते (धुनते) समय उसको ऊपर उठाना न पड़े।

५—ज्यादा लचक लाने के लिए एक के नीचे दूसरा धनुष बाँधा जाता है।

६—धनुष के लिए काम में आनेवाली कमठी कीड़ा लगी हुई, गीले बाँस की या बीच में से फटी हुई न हो।

७—तुनाई करके धुनाई करने की पद्धति में धनुष की आवश्यकता नहीं होती लेकिन अन्य सब पद्धतियों में तो धनुष का उपयोग करना ही चाहिए।

शिक्षकों को सूचना—

१—धनुष युद्ध का एक अस्त्र था, उसका जीवन में वस्त्र के लिए उपयोग।

२—प्रकृति में धनुषाकृति की वस्तुएँ।

३—गुरुत्वाकर्षण का नियम।

४—स्थिति स्थापकत्व (लचक)।

५—बाँस की कमठी, लकड़ी पट्टी, रबर की पट्टी, फौलाद के तार आदि के गुण विशेष।

पाठ तीसरा

ताँत

आँत या पुट्ठे की डोरी को ताँत कहते हैं। ताँत शब्द का अर्थ होता है बारीक मजबूत और चीमड़ डोरी।

तांत आँत या पुट्ठे की बनाई जाती है, भेड़ बकरी की आँत से और गाय बैल के पुट्ठे से ताँत बनाते हैं। आँत और पुट्ठे में चीमड़पन होता है। आँत हर एक प्राणी के होती है। भेड़ बकरी की आँत ताँत बनाने के काम में लेने का कारण यह है कि उसकी मोटाई जैसी चाहिए वैसी है और वह ज्यादा चीमड़ होती है और काफी लम्बी भी होती है। गाय बैल की पीठ पर रीड़ की दोनो तरफ कंधे से पूंछ की जड़ तक का भाग पुट्ठा कहलाता है।

आँत की ताँत पुट्ठे की तांत की अपेक्षा मजबूत और चीमड़ होती है। बकरी जितनी निरोग होगी आँत उतनी ही मजबूत होगी। आँत की मोटाई सब जगह समान नहीं होती। समान मोटाई की आँत की ताँत भी समान बनती है। जितनी मोटी ताँत की जरूरत हो उसी परिमाण की मोटाई की आँत भी लेनी चाहिए। ताँत को ज्यादा मजबूत बनाने के लिए पतली आँते ज्यादा संख्या में लेनी चाहिए।

आँत नली जैसी पोली वस्तु है। वह १८ फीट लम्बी होती है। हर प्राणी के पेट मे दो आँते होती हैं। एक छोटी, दूसरी बड़ी। बकरी की छोटी आँत की ताँत बनाते हैं। ताजा, नमकीन व सूखी—ऐसी तीन प्रकार की आँते बाजार मे बिकने के लिए आती हैं। ताजी अर्थात् प्राणी की मौत के बाद २४ घंटे के अन्दर निकाली हुई। ताजी आँत दो प्रकार की होती है,—मारे हुए बकरे की और मरे हुए बकरे की। नमकीन अर्थात् नमक लगाकर सुखाई हुई और सूखी अर्थात् धूप मे सुखाई हुई। ताजा आँत की ताँत सबसे मजबूत होती है और सूखी की कमजोर। आँत के और भी दो प्रकार हैं। एक चर्बी वाली दूसरी बिना चर्बी की। ताँत के लिए चर्बी वाली आँत अच्छी रहती है। बिना चर्बी की आँत रैकेट्स, खिलौने आदि के लिए रंगीन ताँत बनाने के काम में आती है। वह महँगी भी होती है।

पुट्ठे के चार प्रकार ध्यान मे रख कर उसका मूल्य ठहराया जाता है.—

१—पुट्ठे की लम्बाई चौड़ाई,

२—उसका वजन,

३—चर्बी का है या बिना चर्बी का,

और ४—मरे हुए जानवर का है या मारे हुए का।

पुट्ठा यदि खूब लम्बा चौड़ा है तो उससे तन्तु अधिक होंगे और उसकी ताँत भी ज्यादा बनेगी। यदि इसी प्रकार

उसका वजन ज्यादा है तो भी ताँत ज्यादा ही बनेगी। चर्बी वाला है तो ताँत ज्यादा मजबूत बनेगी। मारे हुए जानवर का है तो उसके तन्तु मजबूत होंगे। इसलिए ताँत मजबूत बनेगी।

पुट्ठा कई बारीक, चीमड़ और मजबूत तन्तुओं का घना होता है। वह जब गीला होता है और साफ रहता है तब उस पर रेशम के समान चमक होती है और उसका रंग केतकी के समान पीला सा होता है। यदि उसके तन्तु कतर लिए गये हैं या टूट गये हैं तो उसकी ताँत कम बनेगी। वह चर्बी वाला है या बिना चर्बी का, मरे हुए पशु का है या मारे हुए का इसकी परीक्षा ताँत बनाने वाला ही कर सकता है।

आँत की ताँत की परीक्षा करने के लिए नीचे लिखी बातों पर ध्यान देना चाहिए:—

१—जिसमें तारों की संख्या ज्यादा हो उसे उत्तम समझना चाहिए। मोटाई 'वायरगेज' से नापते हैं। साधारणतया १५ से २१ गेज की ताँत धुनने के लिए काम में आती है। १५ गेजी ताँत २१ गेजी की अपेक्षा मोटी होती है। प्रत्येक गेज में तारों की संख्या कम ज्यादा हो सकती है। उदाहरण के लिए २१ गेजी ताँत दो-तारी भी हो सकती है और तीन-तारी भी।

२—ताँत पूरी मजबूत है या नहीं यह देखना अच्छा है। मजबूती

की परीक्षा एक यंत्र से की जाती है। सूत की मजबूती की परीक्षा के लिए जो यंत्र काम में लाया जाता है उसी प्रकार का यंत्र ताँत की मजबूती की परीक्षा के लिए काम में लाते हैं अधिक वजन उठानेवाली ताँत अधिक मजबूत समझी जाती है। मजबूती की परीक्षा के लिए २ से २। फीट लम्बा टुकड़ा लिया जाता है।

३—मजबूती देखते समय उसका बढ़ाव भी देखना चाहिए। मजबूती की परीक्षा करने में उस से वजन उठाते समय वह टूटने के पहले कुछ लम्बी हो जाती है। इसी को बढ़ाव कहते हैं। यह बढ़ाव यदि प्रमाण से ज्यादा या कम हो तो दोनों ही दोष माने जाते हैं।

४—ताँत में यदि बदबू आती है तो वह खराब समझी जाती है। बदबू आने का कारण यह है कि आँत अन्दर से साफ न धुलने के कारण, उसमें मांस, अन्न, कण आदि रह जाते हैं और वे सड़ने लगते हैं। उनके सड़ने से ताँत भी सड़ने लगती है। इस दोष को छिपाने के लिए बनाने वाले उसमें तेल लगा देते हैं।

५—यह भी देखना पड़ता है कि ताँत समान सुटाई की और समान बट की है या नहीं, और तारों की संख्या सब जगह समान है या नहीं। ताँत बनानेवाले लोग दोनों सिरों पर ज्यादा तार लगा देते हैं पर बीच में कम लगाते हैं और इस

२—ताँत

प्रकार धोखा देने की कोशिश करते हैं। ताँत की घिसाई ठीक तरह हुई है या नहीं यह भी देखना पड़ता है।

पुट्ठे की ताँत का बढ़ाव कम होता है। उसी प्रकार उसकी वजन उठाने की शक्ति भी आँत की ताँत की अपेक्षा कम होती है। इसका कारण यह है कि वह अनेक बारीक तन्तुओं की बनी होती है। गोलाई, वट, घिसाई, समानता, सफाई व चिमड़पन आदि हैं कि नहीं यह देखना पड़ता है। बदबू आना ठीक नहीं।

आँत एक पूरा तार है और उसी तार की ताँत बनती है। इसलिए वह पुट्ठे की अपेक्षा मजबूत होती है। इसी से उसका बढ़ाव ज्यादा होता है और वह चीमड़ भी ज्यादा होती है। इसीलिए मोटाई कम होने पर भी वह अधिक काम देती है।

धुनकी का अच्छा या बुरा होना ताँत की मोटाई पर निर्भर है। ताँत मोटी होने से धुनकी का स्वगति-भ्रमण अधिक जगह में होता है। भ्रमण अधिक जगह में होने से रुई के तन्तुओं के गुच्छे के गुच्छे उसपर लपट जाते हैं। इसलिए रुई के हर एक तन्तु को अलग-अलग करने का काम कम होता है। ताँत बारीक होने से उसका स्वगति-भ्रमण कम जगह में होता है और ऐसा होने से हर तन्तु आसानी से अलग हो

इसी प्रकार बराबर लम्बाई के मोटे और बारीक तार पर एक ही वेगसे चोट लगाने पर बारीक तार का कम्पन* बहुत समय तक टिकता है। इसलिए बारीक तार पर चिपके हुए तन्तु देर तक नाचते रहते हैं। ऐसा होने से तन्तु का वट निकालने का यह उद्देश्य पूरा होता है। अतः ताँत जितनी बारीक होगी उतने ही तन्तु ज्यादा अलग होंगे, और उनका वट ठीक प्रमाणमें निकल जानेसे वे ज्यादा काम लायक बनेंगे।

अलग २ प्रान्तों में अलग २ प्रकार की ताँत काम में लाई जाती हैं। स्थानिक आवश्यकता के अनुसार उसकी मोटाई रखी जाती है। मोटा सूत कातनेवाले प्रान्तों में मोटी और बारीक सूत कातनेवाले प्रान्तों में बारीक ताँत काम में आती है। आन्ध्र जैसे अति बारीक सूत कातनेवाले प्रान्त में तो बारीक ताँत ही नहीं वरं केले की छाल की पतली डोरी भी काम में लाई जाती है। इसका कारण यह है कि तुनाई करने के बाद धुनने से ताँत पर विशेष जोर नहीं पड़ता। बिहार में मूंज की डोरी की ताँत काम में लाई जाती है। रामपुर और छत्तीस गढ़ में बिना मुठिये के ही धुनते हैं और ताँत डोरी की बनाते हैं।

ताँत का उपयोग किये बिना रूई धुनना असम्भव नहीं। मिल में ताँत का उपयोग नहीं किया जाता। वहाँ

---

* 'कंप व स्वगति' के पाठ में 'कंप व स्वगति-प्रमाण' का अर्थ देखिये।

लोहे के तारों के ब्रशों का उपयोग होता है। इसी प्रकार उंगलियों से भी तन्तुओं को अलग करके धुनने की क्रिया हो सकती है। पर समय बहुत नष्ट होता है।

साधारणतया १२ नम्बर तक का सूत कातने के लिए १५ से १७ गेजी ताँत काम में लानी चाहिए। ३० नम्बर तक के सूत के लिए १९ गेजी और इस से आगे बारीक और सूक्ष्म सूत कातने के लिए २१ गेजी ताँत काम मे लानी चाहिए। ताँत का एक गड्डा १६ से १८ फीट लम्बा होता है।

ताँत को चूहों से बचाना चाहिए। चूहे ताँत को कुतर डालते हैं। इसी प्रकार ताँतको हवा की नमी से बचाना चाहिए। इसके लिए बरसात के दिनों में उस पर कपड़ा लपेट देना चाहिए। खुली रहने या धूप या गर्मी लगने से उसका बट खुल जाता है इसलिए उसे बन्द करके रखना चाहिए।

सारांशः—

१—ताँत की किस्मे (अ) आँत की (आ) पुट्ठे की (इ) फेले के छिलके की डोरी या मूंज की डोरी आदि की।

२—आँत की ताँत सब से मजबूत, पुट्ठे की उस से कमजोर और अन्य प्रकार की सब से कमजोर होती हैं।

३—ताँत खरीदते समय उसकी मजबूती बट, सफाई और बदबू आदि पर ध्यान देना चाहिए।

४—मोटी ताँत से धुनाई अच्छी नहीं होती; बारीक ताँत से रूई अच्छी धुनी जाती है।

५—तार की मोटाई या व्यास नापने के एक साधन को 'वायरगेज' कहते हैं। जैसे जैसे गेज संख्या बढ़ती है वैसे वैसे तार की मोटाई कम होती जाती है।

६—रूई के तन्तुओं को अँगुलियों से सीधा करने को 'तुनाई' कहते हैं ऐसा करने से कमजोर तन्तु निकल जाते हैं। महीन सूत कातने के लिए धुनने के पहिले यह क्रिया की जाती है।

७—चूहों से, हवा से, नमी से और धूप आदि की गर्मी से ताँत को बचाना चाहिए।

शिक्षकों को सूचनाः—

१—ताँत किस किस काम में आती है?

२—बकरी की क़िस्में।

३—कंप सिद्धान्त का ज्ञान।

४—संघर्ष सिद्धान्त का ज्ञान।

५—प्राणियों के पेट की रचना।

पाठ चौथा

मुठिया

तॉंत पर प्रहार करके उसमें स्वगति और कम्प उत्पन्न करने के साधन की हैसियत से मुठिया महत्व रखती है।

मुठिया के तीन हिस्से रहते हैं:—गोटियाँ, छटकनी और डंडी। मुठिया के दोनों सिरों के गोल भाग को गोटियाँ कहते हैं। गोटियों का वह ढालू हिस्सा जिसको तॉंत से टकराया जाता है उसे छटकनी कहते हैं और मुठिया की बीच की डंडी को डंडी कहते हैं।

मुठिया बनाने के लिए कौन सी लकड़ी चाहिए, उसका वजन कितना होना चाहिए, छटकनी का कोण उसकी गोलाई, पृष्ठ भाग और लम्बाई कितनी होनी चाहिए इत्यादि के बारे में विचार करना आवश्यक है।

प्रहार का तॉंत पर कम से कम दुष्परिणाम हो ऐसी लकड़ी मुठिया के लिए पसन्द करनी चाहिए। लकड़ी ऐसी भी होनी चाहिए कि तॉंत के साथ घर्षण के कारण छटकनी के छोटे २ टुकड़े उखड़ न जांय, बल्कि वह अधिक २ चिकनी बनती जाय। वह लकड़ी इतनी भरी हो कि प्रहार करने में उसके भारीपन की मदद मिल जाय। इसमें ऐसा भी गुण हो

कि सतत प्रहार करने के बाद छटकनी का घर्षण का भाग कम से कम गरम होता हो। ये सब गुण इमली की लकड़ी में पाये जाते हैं। बबूल, खैर और शीशम की लकड़ी भी इसके लिए अच्छी है। इन सभी प्रकार की लकड़ियों का साल या गाभा ही उपयोग में लाया जाता है क्योंकि खाल की अपेक्षा साल मजबूत और भारी रहता है। खाल के तन्तुओं का पोषण भी अधिक हुआ रहता है यानी वे परिपक्व रहते हैं।

मुठिया का वजन न बहुत अधिक न बहुत कम होना चाहिए। वह ताँत की मोटाई के अनुसार होना चाहिए। यदि मुठिया आवश्यकता से अधिक भारी हुई तो उसके प्रहार से ताँत टूटती रहेगी। यदि आवश्यकता से कम भारी हुई तो उसके प्रहार का ताँत पर कम असर होगा। और परिश्रम बढ़ जायेगा। इसलिए उसका वजन इतना हो जिस से प्रहार करने का काम भी आसान बन जाय और ताँत पर उसका बुरा असर भी न हो।

मुठिया मुट्ठी में आसानी से पकड़ी जा सके इतनी वह लम्बी होनी चाहिए। उसके वजन का सम्बन्ध ध्यान में रख कर उसकी लम्बाई ठहरानी पड़ती है। साधारण तौर पर यह लम्बाई ६ से ८ इन्च तक ठहराई जाती है।

मुठिया का सारा पृष्ठ भाग चिकना रहना जरूरी है। मगर उसकी छटकनी तो विशेष रूप से चिकनी रहनी चाहिए।

क्योंकि उसी से तॉंत पर-प्रहार किया जाता है। छटकनी के पास का डंडी का १ से १॥ इञ्च भाग भी चिकना रहना आवश्यक है क्योंकि उसका भी तॉंत के साथ घर्षण होता है। छटकनी या डंडी का यह १ से १॥ इञ्च भाग यदि चिकना न रहा तो आघात के समय तॉंत के तन्तु उखड़ जाते हैं और वह जल्दी टूट जाती है।

छटकनी का डंडी के साथ बननेवाला कोण सबसे अधिक महत्व का है। छटकनी से ताँत खिंची जाती है और बाद मे फिसला दी जाती है। यदि छटकनी का डंडी के साथ समकोण बना हो तो खिंची गई ताँत जल्दी फिसला नहीं दी जायेगी और गोटिया के किनारे के साथ तेजी से घर्षण हो जायेगा। यदि वह कोण समकोण से कम अंश का हुआ तो गोटिया के किनारे के साथ तॉंत का घर्षण तो होगा ही, ताँत के कम्प पर भी उसका असर होगा। कम्प की संख्या का परिमाण कम रहेगा। इसलिए कम्प का नाश न हो और तॉंत की ख़राबी भी न हो इस हिसाब से वह कोण बनाया जाय। महीन ताँत के लिए वह कोण कुछ अधिक विशाल होना आवश्यक है और मोटी तॉंत के लिए कुछ कम। महीन ताँत नाजुक रहती है इसलिए विशाल कोण की आवश्यकता है।

गोटियों से एक विशेष फायदा है। तॉंत पर प्रहार करने मे उसके वजन की मदद मिला करती है, गोटियों का

आकार ताँत के प्रकार पर निर्भर रहता है।

मुठिया की लम्बाई कभी ६ कभी ७ तो कभी ८ इञ्च तक रखी जाती है। गोटियों का व्यास १ से १॥ इञ्च तक रखा जाता है। उनकी लम्बाई उनके व्यास से १ या २ सूत अधिक रखी जाती है और डंडी का व्यास आधा से पौन इञ्च तक।

सारांश—

१–मुठिया के लिए इमली के पेड़ का साल सब से अधिक अच्छा है। खैर, बबूल, शीशम आदि की भी लकड़ी चल सकती है।

२–मुठिया का वजन ताँत की मोटाई पर अवलम्बित है। महीन ताँत के लिए हलकी और मोटी ताँत के लिए भारी मुठिया आवश्यक है।

३–छटकनी के कोण विशेष महत्व के हैं। उन्हें कुछ विशाल रहना चाहिए।

४–छटकनी और ताँत से घर्षित होनेवाला डंडी का भाग; इनका विशेष रूप से ध्यान रखना पड़ता है।

५–मुठिया की लम्बाई ६ से ८ इञ्च तक रखी जा सकती है।

६–उसका काम समाप्त हो जाय तब उसे कपड़े में लपेट कर रखना चाहिए।

शिक्षकों को सूचनाः—

१–लकड़ी का किस्म, २–कोण-भूमिति, ३–लकड़ी का काम।

पाठ पाँचवाँ

चटाई

कपरेवाली रूई को धुनने की अत्यन्त आवश्यकता है। यदि रूई में से कचरा निकाल दिया गया हो तो चटाई की उतनी जरूरत नहीं रहती। फिर भी चटाई की इसलिए जरूरत पड़ती है कि रूई के छोटे तन्तु उसमें से धुनते समय नीचे गिरते रहें। रूई के सभी तन्तु समान लम्बे नहीं होते। विनौले के मुंह के पास के तन्तु छोटे होते हैं और उसके उभरे हुए भाग पर के तन्तु लम्बे। धुनते समय तन्तुओं पर जो झटके लगते हैं उनके कारण छोटे तन्तु नीचे गिर पड़ें इसी लिए चटाई का उपयोग होता है।

कचरा तन्तु की अपेक्षा भारी होता है चाहे वह पत्ती का हो या अन्य किसी भी चीज का हो। तॉंत की फटकार के पड़ने पर वह अपने ही वजन के कारण जमीन पर नीचे नीचे उतरने लगता है। इस प्रकार वह उतरते हुए चटाई पर आता है और चटाई की रचना इस प्रकार की होती है कि वह उस पर टिक नहीं सकता और वहाँ से भी वह खिसक कर नीचे गिर जाता है।

तुनाई पद्धति में कचरा नहीं रह सकता। तुनाई कपास

की ही होती है इसलिए रूई में कचरा नहीं होता। धुनी हुई रूई में छोटे तन्तु बहुत कम ही रहते हैं। इसलिए धुनाई पद्धति में चटाई की आवश्यकता नहीं। बल्कि उलटे इस बात का खतरा रहता है कि कहीं अच्छे तन्तु भी इस चटाई से नीचे न गिर पड़ें।

चटाई 'देवनल' या ढोंढ़ की बनाई जाती है। नदी के किनारे दलदल की जगह में यह पैदा होता है। गुजरात में 'देवनल' जैसी ही एक दूसरी चीज होती है जिसे 'सरकाड़' या सरकंडा कहते हैं। यह सरकण्डा 'देवनल' की अपेक्षा अधिक अच्छा रहता है। 'देवनल' का पृष्ठ भाग नैसर्गिक रूप से चिकना होता है और वह गोल भी होता है। उसका पृष्ठ भाग मजबूत रहता है। ढोंढ़ को लम्बाई में समान रख कर उनको उनकी चौड़ाई में चार जगह पर रस्सी से बाँधा जाता है। यह क्रिया पर्दे के लिए बनाए गये चिक जैसी है। देवनलों की लम्बाई ३॥ से ४ फीट तक रहती है और वह इतना लेना चाहिए जिस से चटाई की चौड़ाई १ फीट हो। मोटे हों तो कम संख्या में लेने चाहिए; और पतले हों तो अधिक। उनमें बाँधी हुई रस्सियों के कारण दो देवनलों के बीच अन्तर रह जाता है। इसी अन्तर से रूई का कचरा और तन्तु नीचे गिर जाते हैं। देवनलों का पृष्ठ भाग गोल और चिकना रहता है इसलिए रूई से गिरा कचरा वहाँ ठहर नहीं सकता।

जहाँ देवनल या ढोंढ़ नहीं मिलता है वहाँ बाँस के

पनच की चटाई बनाई जाती है। अंगुली डेढ़ अंगुली चौड़ा चपटा पनच निकाल कर उन्हें बुना जाता है। उन्हें इस तरह खड़ा और आड़ा बुना जाता है जिस से पनचों के बीच समान चतुर्भुज कोण के रूप से थोड़ा २ अन्तर रहे। लेकिन ऐसी चटाई पर से कचरा और छोटे तन्तु नीचे गिरते हों ऐसी बात नहीं। क्योंकि पनच की चौड़ाई अधिक रहने से कचरा वहाँ ठहर सकता है।

जमीन पर चटाई फैला कर उस पर रूई नहीं धुननी चाहिए। चटाई तो जमीन से कुछ ऊँची रहनी चाहिए। ऊँची रहने से ही कचरा नीचे गिर सकेगा। सब से अच्छा तो यही होगा कि धुननेवाले की ओर का चटाई का भाग जमीन पर ही रखा जाय। और दीवार की ओर का भाग जमीन से ३ या ४ इञ्च ऊँचा।

देवनलो या ढोढों में जहाँ गाँठ रहती है वहाँ की पत्तियाँ निकाल कर उस जगह चिकनी बनानी चाहिए। नहीं तो वहाँ तन्तु चिपक जा सकते हैं। चटाई खरीदते समय यह भी देखना चाहिए कि उस की रस्सियाँ कस कर बँधी हैं या नहीं ?

धुनाई होने के बाद चटाई को लपेट कर किसी ऊँची जगह पर रखनी चाहिए नहीं तो उस पर पैर पड़ने और इससे देवनल या ढोढ के टूट जाने की सम्भावना रहती है।

सारांश:—

१—कचरा या छोटे तन्तु नीचे जमीन पर गिर जाँय इसलिए चटाई काम में लाई जाती है।

२—तुनाई पद्धति में चटाई की जरूरत नहीं है।

३—गुजरात की सरदाढ़ या सरकंडा चटाई के लिए उत्तम रहती है। चटाई देवनल की भी बनाई जाती है लेकिन बाँस की चटाई तो इन दोनों की अपेक्षा कम दर्जे का काम देती है।

४—चटाई को एक तरफ जमीन पर और दूसरी तरफ कुछ ऊँची रख कर धुनना चाहिए।

५—चटाई की चौड़ाई ३ फीट और लम्बाई ३॥ से ४ फीट हो

६—देवनल या बाँस का पृष्ठ भाग चिकना न हुआ तो तन्तु चिपक जाते हैं।

शिक्षकों को सूचना:—

१—कचरा नीचे गिर जाता है—गुरुत्वाकर्षण।

२—देवनल, सरकढ़ या सरकंडा—वनस्पति शास्त्र।

३—बिनौले के ऊपर लम्बे और छोटे तन्तु।

पाठ छठाँ

पूनी सलाई

धुनी हुई रूई-पोल को मुट्ठी या चिटकी में पकड़ कर सूत कातना कठिन है। पोल के तन्तु अलग २ तो रहते हैं मगर वे किसी एक दिशा में नहीं रहते। वे आड़े तिरछे, सरल, वक्र, कोई एक दिशा में तो कोई दूसरी दिशा में,—अव्यवस्थित रहते हैं। उन पर चिटकी का अधिकार रखने के लिए उनको संग्रहित करना आवश्यक है। तन्तुओं को संगृहीत करना यानी पूनी बनाना। पूनी बनाने के लिए जो सलाई काम में लाई जाती है उसे पूनी सलाई कहते हैं।

पूनी बनाने में और एक हेतु रहता है। पोल बहुत देर तक और छोटे स्थान में रखना सम्भव नहीं है। उसकी पूनियाँ बना कर छोटी सी जगह में रखी जा सकती हैं और तुलना में अधिक काल तक ज्यों की त्यों टिक सा जा सकती हैं।

पेन्सिल जैसी कोई भी सलाई पोल से लपेट कर, उस पोल को दबा कर और बाद में उस पोल से सलाई को निकाल कर पूनी बनाने का काम निभाया जा सकता है। घास की, लोहे की या पीतल की, सरकंडे की, सींक की या अन्य लकड़ी

की भी सलाई काम में लाई जाती है। लेकिन किसकी सलाई अधिक लाभदायक है यह जानने के लिए हर एक के गुण दोष को जानना आवश्यक है। आगे के नकशे में ये गुण दोष बतलायें जा रहे हैं।

वस्तु	गुण	दोष
१—लोहा	(अ) अधिक भारी रहने से पूनी बेलते समय तंतु स्वाभाविक तौर पर दबाये जाते हैं और इस से वे एक दूसरे पर अच्छी तरह जम जाते हैं।	(अ) हवा की आर्द्रता से लोहा बिलकुल ठंडा बन जाता है और इससे उस सलाई पर लपेटा हुआ पोल जल्दी नहीं निकलता लेकिन घर्षण द्वारा गर्म करने से ही यह दोष निकल जा सकता है।
	(आ) इसका पृष्ठ भाग काफी चिकना बन सकता है। जैसी पूनी में से चिकनी सलाई आसानी से निकल आती है।	
	(इ) पीतल से अधिक सस्ता रहता है।	

वस्तु	गुण	दोष
	(इ) सब जगह समान मोटाई रखी जा सकती है।	
२-बाँस—	(अ) लोहे से अधिक सस्ता। (आ) पृष्ठ भाग चिकना बन सकता है।	(अ) वजन में हलका। (आ) सब जगह समान मोटा रहता ही है ऐसा नहीं। (इ) हवा की आर्द्रता से गोला बनता है; टेढ़ा भी जल्द हो जाता है। (ई) टूटने की सम्भावना रहती है।
३-पीतल-	(अ) भारी बन सकती है। (आ) चिकनी रहती है (इ) मोटाई समान रखी जा सकती है।	(अ) सब से महँगी। (आ) ढालने या घिस कर साफ करने की मजदूरी बहुत अधिक लगती है। (इ) हवा की आर्द्रता का असर पड़ता है। (ई) लोहे से अधिक मुलायम रहती है इसलिए

वस्तु	गुण	दोष
		टेढ़ी होने की सम्भावना अधिक।
४–सरकाड़ या सरकंडा	(अ) पृष्ठभाग चिकना। (आ) सस्ता होता है। (इ) सबजगह समान गोलाईकी रहती ही है ऐसा नहीं।	(अ) शीघ्र टूट जाता है। (आ) टेढ़ी रह सकती है। (इ) टेढ़ापन दूर करना मुश्किल। (ई) गोल रहता ही है ऐसा नहीं। (उ) हलका और पोला रहता है। (ऊ) आवश्यकता से कम मोटा है।
५–लकड़ी–	(अ) तुलना मे सस्ती। (आ) सब जगह समान मोटाई रखी जा सकती है।	(अ) लकड़ी पर रेशे रहते हैं जिनपर तन्तु चिपक जाते हैं। (आ) हलकी। (इ) जल्दी टूटती है। (ई) टेढ़ी होती है। (उ) हवा की आर्द्रता का असर पड़ जाता है।

उपरोक्त गुणावगुणों की चिकित्सा(?)करने के बाद लोहे की सलाई ही पूनी बेलने के लिए सब से अधिक पसन्द मालूम पड़ती है।

पूनी सलाई का पृष्ठ भाग चिकना रहना आवश्यक है। पूनी से वह आसानी से जल्दी निकल सके इसलिए उसका एक तरफ का भाग कम मोटा बनाया जाता है। लेकिन उसका पृष्ठ भाग यदि ठीक चिकना बनाया गया हो तो भी पूनी से जल्दी और आसानी से निकल सकती है। उसको एक तरफ पतली बनाने की आवश्यकता नहीं रह जाती। बल्कि उससे हानि अधिक है। पतले भाग पर तन्तु अधिक संख्या में लपट जाते हैं और पूनी का वह भाग कड़ा बन जाता है। और प्रयत्न से यदि उस भाग पर कम तन्तु लिए जॉय तो पूनी का वह भाग पतला वेला जायेगा और कातते समय वह हिस्सा चिटकी को तकलीफदेह होगा। पूनी की मोटाई सब जगह समान रहना आवश्यक है। इस दृष्टि से सलाई की भी मोटाई समान बनानी चाहिए। पूनी की लम्बाई ख्याल में रख कर ही सलाई की लम्बाई निश्चित की जाती है। सामान्यतः पूनी ७ इञ्च की बनाई जाती है। ७ इञ्च की पूनी वेलते समय पूनी से अतिरिक्त सलाई का कुछ भाग हाथ में ढीला घूमते रहना आवश्यक है। यह हिस्सा ८ इञ्च रखना उचित होगा इसलिए सलाई साधारणतः १५ इञ्च की बनानी चाहिए।

सलाई बहुत पतली हो तो पूनी कड़ी बनती है, उस में पोली जगह भी कम रह जाती है। लेकिन पाल साधारण परिमाण से कम लेकर पतली सलाई पर पूनी वेली जाय तो वह कड़ी नहीं बनेगी। आवश्यकता से अधिक मोटी सलाई

पर भी बेली गई पूनी विसटी से अधिक चौड़ी बन जाती है और कातते समय तन्तुओं पर विसटी का पूरा अधिकार नहीं रहता। इससे सूत पर बुरा असर होता है। हमेशा काममें लाई जानेवाली रूई के तन्तुओं की लम्बाई और सूत के अंक के ख्याल से २॥ या ३ सूत मोटी सलाई उपयोगी ठहरती है। जयवन्ती, व्हेस्स, नवसारी आदि रूइयों से ३० अंक के आस पास का सूत कातने के लिए २॥ सूतकी सलाई इस्तेमाल करनी चाहिए। और जड़ी मनी, रोमी जैसी छोटे तन्तुओ की रूई से १२ से १६ अंक का सूत कातने के लिए ३ सूत की सलाई काम में लानी चाहिए।

सारांश:—

१—लोहे की पूनी सलाई अच्छी है।
२—सलाई सब जगह समान मोटाई की हो।
३—साधारणतः १५ इञ्च लम्बी हो।
४—इसकी चौड़ाई २॥ या ३ सूत हो।
५—हवा की आर्द्रता का असर होता है। इसलिए काम में लेने के पहले कुछ घिस कर गर्म करनी चाहिए।
६—चिकनी हो।
७—पृष्ठ भाग पर खूब ध्यान देना चाहिए। उस पर मोर्चा चढ़ आयेगा या वह असमान होगा तो वह पूनी पर बुरा असर करेगा।
८—लोहे की सलाई की कीमत आठ आने हैं।

शिक्षकों को सूचना:—

१—वनस्पति शास्त्र, लकड़ी के भिन्न २ प्रकार और गुण।

२—खनिज पदार्थ।

पृष्ठ सातवाँ

पूनी पटड़ा और हत्था

इस बात की कल्पना तो पिछले पाठ में की गई है कि पोल को पूनी सलाई पर वेल करके पूनियाँ बनाई जाती है। इससे अच्छी तरह दबा कर बेलना जरूरी होता है। यह ठीक ठीक दबा कर वेला जा सके इसलिए यह जरूरी है कि वे पदार्थ जिन पर यह वेली जाती हो कड़े हों। इसलिए पूनी पटड़ा और हत्था दोनों लकड़ी के ही बनाना अच्छा माना गया है। रोटी वेलने के पटड़े को हम कहते हैं चकला और पूनी वेलने के पटड़े को हम पटरा ही कहते हैं।

जांघ पर हथेली से पूनी वेलने की पद्धति देहातों में पाई जाती है। कहीं २ तो पीढ़े पर या पिंडली पर भी हथेली से पूनी वेली जाती है। पूनी के तन्तु समपरिमाण में दब जाँय इसलिए दवानेवाले दोनों साधनों का समतल रहना आवश्यक है। हथेली समतल नहीं रहती है इसलिए यह पूनी बनाने के योग्य नहीं है।

पूनी पटरे की चौड़ाई उस पर बेली जानेवाली पूनी की चौड़ाई पर निर्भर रहती है; साधारणतया वह ८ इञ्च रखना अच्छा है। उसकी लम्बाई १५ इञ्च रखी जाय तो बेलते समय सलाई के फेरे काफी होंगे। हत्थे की लम्बाई ९ इञ्च की हो और चौड़ाई ८ इञ्च।

पूनी पटरी और हत्थे का पृष्ट भाग चिकना होना चाहिए। हत्थे को पकड़ने के लिए जो मूंठ रहती है वह अर्ध गोलाकृति होनी चाहिए। वह ऐसी हो कि अर्ध वर्तुल के अन्दर से चारों अँगुलियाँ अच्छी तरह बैठ जाँय और वह मजबूत पकड़ी जाय। यदि मजबूत पकड़ी न जा सकी तो बेलते समय सलाई पर आवश्यक दबाव नहीं पड़ेगा और पूनी अच्छी नहीं बनेगी। मूंठ लकड़ी की बनाई जाती है। कोई २ यह मूंठ नेवारी या चमड़े के पट्टे की बनाते हैं। लेकिन लकड़ी की मूंठ कड़ी रहती है। लकड़ी का यह कड़ापन मूंठ को मजबूत पकड़ने मे मदद करता है। इसलिए लकड़ी की मंठ अच्छी है।

सारांशः—

१–पूनी पटरी और हत्था दोनों लकड़ी के इस्तेमाल करना अच्छा है।

२–पूनी पटरी और हत्था दोनों के पृष्ठ भाग चिकने रहने चाहिए।

३–हत्थे की मूंठ नेवार या चमड़े की अपेक्षा लकड़ी की अच्छी होती है। वह अर्ध गोलाकृति रहना चाहिए।

४-पूनी बेलते समय जिस भाग पर घर्षण होता है वह खुरदुरा न हो इस पर ध्यान देना चाहिए।

५-पूनी पटरी की लम्बाई १५ इंच हो और चौड़ाई ८ इंच। हत्थे की लम्बाई ९ इंच और चौड़ाई ८ इंच।

शिक्षकों को सूचनाः—

१-रोटी का चकला बेलना।

२-खड़े और आड़े रेशे (लकड़ी के)।

पाठ आठवाँ

काँकर और चमड़ा

काँकर बकरे के चमड़े की बनाई जाती है। बकरे का चमड़ा चूनेके पानी में तीन चार दिन तक रखा जाता है। इसके बाद वह जमीन पर तान कर ठोका जाता है और उसमें लगा हुआ गोश्त निकाला जाता है। फिर उसको पलट कर ठोक दिया जाता है और उसके बाल छुरी से काट दिये जाते हैं। इस तरह साफ किया हुआ वह चमड़ा वैसा ही रखा जाता है जब तक वह पूरा सूख न जाय। इस कच्चे चमड़े को ही काँकर कहते हैं। ढिमकी एकतारी वगैरह के लिए यही चमड़ा काम में लाया जाता है। काँकर के लिए बकरे का ही चमड़ा लिया जाता है क्योंकि वह दूसरे चमड़ों की बनिस्बत अधिक पतला

और लचीला होता है।

गाय, बैल, भैंस, भैंसा आदि जानवरों के पकाये चमड़े को इस किताब में चमड़ा कहा है। चमड़े से चप्पल जूते आदि बनाये जाते है।

धुनाई मे ऊपर के दोनों प्रकारके चमड़ों की आवश्यकता रहती है। इसलिए 'कॉकर पट्टी' और 'चमर पट्टी' इन दोनों संयुक्त शब्दों का वाक्प्रचार रूढ़ है। यह दोनो प्रकार की पट्टी साधारणतया १ इंच चौड़ी व फुट सवा फुट लम्बी होती हैं।

कॉकर पट्टी धुनकी के पंखे पर (कुन्दा या पटरा) लगाई जाती है। और चमरपट्टी उसके माथे पर। मुठिया के आघात से तॉत पंखे और माथे पर टकराती रहती है और इस तरह पंखे और माथे के साथ उसका घर्षण बढ़ जाता है। तॉत लकड़ी की अपेक्षा कमजोर रहती है। इसलिए इस संघर्ष मे वह अधिक टिक नहीं सकती। वह जल्दी टूट जाती है। पंखे पर (यानी लकड़ी और तॉत इन दोनो के बीच) लगाई कॉकर पट्टी उसे जल्दी टूटने से बचाती है। लेकिन इस से पंखे के साथ होनेवाला तॉत का घर्षण उसी के साथ होता है। यदि वह पट्टी लचीली (जल्द न फटनेवाली) न हो तो जल्दी फट जायेगी। इसलिए बकरे का कच्चा चमड़ा ही इस काम के लिए लिया जाता है।

कॉकर पट्टीका और भी एक उपयोग होता है। यह पट्टी पंखे पर तान कर बाँधी जाती है और उसके नीचे चाकी पंखा

और उसके बीच में चमड़े की जीभ (आत्मा) लगाई जाती है। इस जीभके कारण पट्टी और पंखेके बीच पोली जगह बन जाती है। काँकर पट्टी के इस तान के और इस पोली जगह के कारण ताँत के आघात के साथ एक मधुर आवाज निकलती है। यह आवाज़ देर तक रहती है। काँकरपट्टी लचीली, पतली और तंग रहने के कारण आवाज पैदा करने व उसकी प्रतिध्वनि निर्माण करने और उसे देर तक टिकाने का काम अच्छी तरह करती है।

लेकिन माथे पर बिठाई चमरपट्टी तो सिर्फ ताँत की रक्षा करने का ही काम करती है। इसके इन रक्षण कार्य के कारण गुजराती भाषा में उसका नाम 'रखी' (रक्षण करनेवाली) है। यह माथे की लकड़ी के साथ होनेवाले घर्षण से ताँत को बचाने का काम तो करती ही है, इसके अलावा और भी एक काम करती है। धुनकी की डंडी पर से चक्कर खाती हुई आनेवाली ताँत का उस डंडी की लकड़ी के साथ घर्षण नहीं होने देती। यह काम पतली और नाजुक काँकरपट्टी का चमड़ा नहीं कर सकता है। इसलिए पकाया हुआ मोटा चमड़ा ही यहाँ लगाना चाहिए।

कुछ धुनैये तो पंखे पर भी काँकरपट्टी के बजाय चमर-पट्टी ही लगाते हैं। उन्हें धुनकी पर बारीक काम करना नहीं रहता है। उनका काम कलापूर्ण नहीं रहता है। इसलिए उनकी ताँत भी बहुत मोटी रहती है और उसपर आघात भी

बहुत जबर्दस्त किया जाता है। इसलिए मोटी और पक्की चमर-पट्टी लगाना ही उनके लिए उचित है।

माथे पर आवाज़ पैदा करने की और उसे टिकाने की भी जरूरत नहीं है। उसका कोई उपयोग नहीं है। बल्कि उससे कुछ नुकसान ही है। परिश्रम को व्यर्थ जाने देना और नुकसान को मोल लेना ठीक नहीं है। इसलिए माथे पर पोली जगह नहीं बनाई जाती है।

तुनाई पद्धति में धुनकी की आवश्यकता नहीं रहती है। वहाँ तो धनुष काम में लाना चाहिए। यदि धुनकी काम में लाई जाती है तो वह धनुष के स्थान में। इस धुनकी में आवाज पैदा करने की कोई जरूरत नहीं है। इसलिए इन पट्टियों की भी जरूरत नहीं रह जाती।

सारांश.—

१–कोंकरपट्टी बकरे के चमड़े की रहती है। चमड़ा पकाया हुआ नहीं बल्कि कच्चा रहता है।

२–चमरपट्टी गाय, बैल, भैंस, भैंसा आदि जानवरों के पकाये चमड़े की बनाई जाती है।

३–कोंकरपट्टी पंखे पर तानी रहती है और चमरपट्टी माथे पर।

४–कोंकरपट्टी १ इञ्च चौड़ी रहती है और एक फुट लम्बी। चमरपट्टी १ इञ्च चौड़ी और १। फुट लम्बी रखी जाती है।

५—काँकरपट्टी और चमरपट्टी को नमी और चूहों से बचाना चाहिए।

६—काँकरपट्टी साफ और सब जगह समान मोटी रहनी चाहिए। चमरपट्टी भी ऐसी ही रहनी चाहिए।

७—एक काँकरपट्टी एक पैसे मे मिलती है। और चमरपट्टी दो पैसे में।

शिक्षकों को सूचनाः—

१—चमड़ा पकाना।

२—बाजो की जानकारी।

३—संघर्ष के नियम।

पाठ नवाँ

आत्मा

कम्प और स्वगति जैसे चाहिए वैसे हैं या नहीं यह आँखों से बराबर देखते रहना संभव नहीं है। इसलिए धुनकी पर ऐसी रचना की जाती है जिससे कम्प के साथ २ उसी के अनुसार आवाज भी होती रहे। इस आवाज से हम कम्प की कमी बेशी तुरंत जान सकते हैं और उसे ठीक कर सकते हैं। आवाज का नियमन करनेवाला धुनकी का यह हिस्सा आत्मा कहलाता है। इसी आत्मा से स्वर में माधुर्य आता

है । इसी से कम्प की कमी वेशी का अर्थ बोध होता है । यही कम्प की आत्मा होती है, यही आवाज़ की और यही धुनकी की भी । इसे मणि या जीभ भी कहते हैं ।

पंखे का मुख और काँकरपट्टी के बीच आत्मा रहती है । आत्मा ताँत, काँकरपट्टी और पंखे का मुख तीनों को एक सुरेखा में रखती है । आत्मा को जहाँ रखने से सुरीली आवाज़ निकलती है और वह देर तक टिकती है वहीं उसे स्थिर किया जाता है ।

आत्मा प्रायः काँकरपट्टी के टुकड़े से ही बनाई जाती है । वह टुकड़ा दुहरा, तिहरा मोड़ कर और यदि आवश्यक हो तो उसमें रूई डाल कर वह बैठाया जाता है । चमड़े के कड़ा रहने के कारण दोहरा, तिहरा मोड़ने पर उसमें पोली जगह रह जाती है । यही पोलापन आवाज़ को देर तक क़ायम रखता है । यदि यह आत्मा लकड़ी की या ऐसी ही दूसरी चीज की बनाई गई तो काँकरपट्टी के साथ और ताँत के साथ भी घर्षण बढ़ जाता है और वे जल्दी टूट जाती हैं । आवाज़ भी देर तक क़ायम नहीं रहती । इसलिए वह काँकरपट्टी के लिए इस्तेमाल किये जानेवाले चमड़े से ही बनाई जाती है ।

काँकरपट्टी के नीचे पोली जगह क़ायम रखनेका भी काम आत्मा करती है । आवाज़ को फैलाने और देर तक टिकाये रखने में इसका उपयोग है । ताँत का काँकरपट्टी को कितनी

दूर तक खुली रहना आवश्यक है यह भी वही बतलाती है।

आत्मा उतनी मोटी रखनी पड़ती है जितनी आवश्यक हो। इसके लिए उसकी ऊपर बतलाई क्रियाओं को ख्याल में रखना चाहिए। वह दोनों तरफ समान होनी चाहिए। यदि एक तरफ मोटी और दूसरी तरफ बारीक हो तो वह फिसल कर निकल जायेगी। यदि दोनों सिरों पर मोटी और बीच मे बारीक हो तो आवाज खरखरी निकलेगी, धाँत का काँडरपट्टी के एक विवक्षित स्थान पर घर्षण होगा और वह शीघ्र कटती जायेगी।

आत्मा काँडरपट्टी की अपेक्षा कुछ अधिक लम्बी होनी चाहिए। लगभग १½ इञ्च होनी चाहिए। इससे उसे आगे पीछे खिसकाना आसान हो जाता है। उसकी चौड़ाई पौन इञ्च होनी चाहिए। उसमें कमी बेशी हुई तो काँडर पट्टी पर उसका बुरा असर होता है। [जब हम कहते हैं कि कम्प बहुत है या वह कम है तब हमें एक बात ख्याल में रखनी चाहिए। किसी विवक्षित काल मर्यादा में इस कम्प की संख्या कितनी है, यह तो एक बात है। और यह कम्प कितने समय तक रहता है यह दूसरी बात है। धुनने की क्रियामें पहली बात आवश्यक है। यानी विवक्षित काल में कम्प की संख्या अधिक होनी चाहिए। यह संख्या आघात के तुरन्त बाद बहुत ही रहती है। जिस समय कम्प बहुत ही रहता है उस समय ताँत पर चढ़े तन्तु अच्छी तरह फटकारे जाते हैं और उनका अनावश्यक गर्द

कम हो जाता है। यह कम्प की गति ध्वनि के सहारे आसानी से पहचानी जाती है। कम्प की गति मन्द होने पर ताँत पर नवीन ठोंक मारी जाती है और इस प्रकार गति पुनः बढ़ाई जाती है]।

सारांशः—

१—आत्मा काँकरपट्टी के चमड़े की बनाई जाती है। उसको मोड़ने पर बनने वाली पोली जगह ध्वनि को फैलाने का और देर तक टिकाये रखने का (स्थिति स्थापकता का) काम करती है।

२—आत्मा १। इञ्च लम्बी हो और पौन इञ्च चौड़ी; उसकी मोटाई आवश्यकता के अनुसार होनी चाहिए।

३—आत्मा कम्पकी गतिको कानसे पहचानने का साधन है।

४—आत्मा सब जगह समान मोटी होनी चाहिए एक ओर ऊँची और दूसरी ओर नीची नहीं होनी चाहिए। बीच में भी अधिक नीची या अधिक ऊँची नहीं होनी चाहिए।

५—आत्मा को जहाँ रखने से ध्वनि सुरीली निकलेगी और वह देर तक टिकी रहेगी वहाँ उसे स्थिर करना चाहिए।

६—आत्मा लकड़ी की या किसी दूसरी कड़ी चीज की बनाई न हो।

शिक्षकों को सूचनाः—

१—ध्वनि शास्त्र।

२—संगीत शास्त्र।

पाठ दसवाँ

कम्प और स्वगति

रूई धुनने के लिए धुनकी की ताँत पर मुठिया से आघात किया जाता है। इस आघात से ताँत में दो क्रियायें पैदा होती हैं। ये दोनों क्रियायें रूई धुनने में आवश्यक हैं। इनमें से एक क्रिया है "कम्प" और दूसरी "स्वगति"। ताँत का आगे पीछे घर्षण कम्प है। ताँत का अपनी चारो ओर उलटा सीधा घूमना "स्वगति" है। दोनों क्रियायें स्वतंत्र हैं और धुनाई के काम में दोनो महत्व रखती हैं।

किसी भी रस्सी में कम्पन पैदा हो सकता है मगर यह कोई बात नहीं है कि उससे स्वगति भी पैदा होगी। यह स्वगति तो केवल तन्तुओं की रस्सी मे ही पैदा होती है। तम्बूरे या सितार का तार तन्तुओं का बना नहीं रहता। यह अनेक तन्तुओ को बट कर बनाई गई रस्सी के समान नहीं रहता वह तो एक ही मोटा तन्तु है। उसमें कम्पन तो पैदा होगा मगर स्वगति पैदा नहीं होगी। तम्बूरे या सितार का तार टूट गया तो वह हवा में थर्राता रहेगा, ध्वनि भी करता रहेगा। मगर वह स्वयं चारो ओर उल्टी सीधी नहीं घूमेगा (तार गोल रहता है इसलिए उस पर प्रहार करने पर वह थोड़ा सा वर्तुलाकार

तो घूमेगा, लेकिन यह घूमना नगण्य है) यही कारण है कि लोहे का तार ताँत से कई गुना मजबूत होते हुए भी वह धुनने के काम में नहीं लाया जाता। स्वगति के लिए तन्तुओं से बनी रस्सी की ही आवश्यकता है। तन्तुओं को बट कर बनाई गई इस रस्सी को तान कर उस-पर प्रहार किया जाय तो वह स्वतः चारों ओर उल्टी सीधी घूमती है। यह घूमना बहुत महत्व का है।

कम्पन तो जल्दी मालूम पड़ जाता है मगर स्वगति का कार्य आसानी से नजर नहीं आता। तन्तुओं की रस्सी में बट रहता है। ऐसी बटी रस्सी का एक सिरा किसी खूंटी में बाँध दिया जाय, दूसरा खुला ही छोड़ दिया जाय और उस रस्सी पर अंगे लकड़ी से प्रहार किया जाय तो मालूम होगा कि रस्सी का बट छूट रहा है और तन्तुओं की आपस की पकड़ ढीली पड़ती जा रही है। धीरे धीरे वे तन्तु एक दूसरे से अलग होते जाते हैं। रस्सी पर किये प्रहार से लेकर तन्तुओं के एक दूसरे से अलग होने तक सब क्रिया—प्रक्रियाओं को देखना आवश्यक है। लकड़ी के प्रहार से रस्सी का वह भाग जिस पर प्रत्यक्ष प्रहार हो गया है; खिंचा जाता है और इससे उसका बट छूटने लगता है। वहाँ के तन्तु एक दूसरे की पकड़ से मुक्त होने की कोशिश करते हैं। यह बट उस भाग से दोनों सिरों तक छूटता जाता है। जहाँ सिरा उसे खुला मिला वहाँ तो वह निकल पड़ता है। और इससे उस सिरे के तन्तु एक दूसरे

से अलग हो जाते हैं। मगर जहाँ सिरा खुला नहीं, बँधा है वहाँ से निकलने के लिए रास्ता न रहने के कारण वह बट वहीं रुक जाता है और तुरन्त लौट भी आता है।

रस्सी के दोनों सिरे यदि बाँधे गये और बाद उस रस्सी पर प्रहार किया गया तो कौनसी प्रक्रिया होती है यह हम देखें। जहाँ प्रत्यक्ष प्रहार हुआ वहाँ का बट, छूटने की कोशिश करता हुआ दोनों सिरों तक चला जाता है। और चूंकि उन सिरों के बँधे रहने के कारण निकल नहीं सकता, वह वहीं रुक जाता है और फिर तुरन्त दोनों तरफ से उस प्रहार की जगह पर लौट आता है। जब वह सिरों की ओर आता रहता है उस वक्त रस्सी के अपनी चारों ओर घूमने की जो दिशा रहती है उस से भिन्न बिलकुल उलटी दिशा बटके लौटते समय रहती है। अर्थात् रस्सी एकबार तो उल्टा घूमती है और दूसरी बार तुरन्त सीधा। लेकिन सिर्फ दो ही बार वह घूम कर स्थिर नहीं हो जाती। दोनों सिरों से लौट आया बट उस प्रहार के स्थान पर एक दूसरे से मिलता है, या यों कहिए कि टकराता है और ज्यों का त्यों सिरों की ओर फिर लौट जाता है। इस तरह रस्सी के अपनी चारों ओर उल्टा सीधा घूमने का आन्दोलन कुछ देर तक चलता रहता है। यदि इसके बीच में दूसरा प्रहार किया जाय तो उसी क्षण से वह सब आन्दोलन शान्त हो जाता है और नया आन्दोलन शुरु होता है। रस्सी की यह बात धुनकी की ताँत को भी पूरी तौर से लागू होगी।

धुनकी की ताँतपर मुठिया से प्रहार करने पर कम्प और स्वगति की कौनसी प्रक्रियायें होती हैं यह यहाँ नीचे दिखलाया जा रहा है:—

क्रिया अनुक्रम	कम्प	स्वगति
१	ताँत चटाई पर रखी रूई के तन्तुओं के पास पहुंचती और उनसे भिड़ जाती है।	
२		भिड़ी ताँत पर तन्तु चिपक कर लिपट जाते हैं।
३	लिपटे तन्तुओं के साथ ताँत रूई की राशि से लौट आती है।	
४	ताँत लिपटे तन्तुओं को नचाते रहती है अर्थात् एक तरह से उन्हें फटकारती है।	
५		फटकारे जानेवाले तन्तुओं का वट कम होता है। ताँतपर चिपके तन्तु तीन प्रकार से रहते हैं:—कुछ तन्तुओं के दोनों सिरे खुले रहते हैं। दूसरों का

क्रिया अनुक्रम	कम्प	स्वगति
६	इस तरह जिन तन्तुओं का बट कम हो गया है उनकी ताँत पर पकड़ ढीली पड़ जाती है और कम्प के कारण वे दूर फेंके जाते हैं।	एक सिरा खुला रहता है और दूसरा बँधा और तीसरों के तो दोनों सिरे खुले (बँधे ?) रहते हैं। पहले और तीसरे प्रकार के तन्तुओं में स्वाभाविक बट रहता है। स्वगति के कारण यह बट छूटता रहता है।

यह प्रक्रिया क्रमशः बराबर होती रहती है। प्रहार से कम्प और स्वगति दोनों का उद्भव एक ही साथ होता है और दोनों का काम एक ही साथ चलता है।

ताँत बिल्कुल ढीली रह गई या बहुत ही कस कर बाँधी गई तो कम्प भी आवश्यक परिमाण में पैदा नहीं होता है न स्वगति ही। आवश्यक परिमाण में कम्प और स्वगति पैदा हों इस तरह ताँत बाँधी जानी चाहिए।

1175

ताँत का कम्प पहचानना आसान है। ताँत की थर्राहट आसानी से दिखाई देती है। इसी तरह आसानी से स्वगति की भी पहचान करनी हो तो एक लम्बा बाल रूई की राशि पर रखा जाय और ताँत पर मुठिया का इस ढंगसे प्रहार किया जाय कि वह उस बाल को स्पर्श करे। बाल ताँत से लिपट जायेगा और बाद में वह बराबर उधेड़ा और लपेटा जाता दिखाई देगा।

सारांशः—

१–ताँत का थर्राना 'कम्प है' और अपनी चारों ओर घूमना 'स्वगति' है।

२–प्रहार से कम्प और स्वगति दोनों क्रियायें एक ही समय शुरु होती हैं। और दोनोंका काम एकही साथ चलता है।

३–किसी भी रस्सी में कम्प पैदा हो सकता है। लेकिन स्वगति तो तन्तुओं से बनाई गई रस्सीमें ही पैदा होती है।

४–ताँत के अधिक ढीली या अधिक तंग रहने से कम्प और स्वगति योग्य परिमाण में पैदा नहीं होती हैं।

५–ताँत के थर्राने से उसके कम्प की हम पहचान कर सकते हैं वैसे ही लम्बे बाल के फटकारने से ताँत की स्वगति भी हम जान सकते हैं।

६–इन दोनों क्रियाओंका ग्राम–धुनाईमें बड़ा महत्व रहता है।

७–धुनाई पद्धति में स्वगति की आवश्यकता नहीं है। क्यों कि धुनने के पहले ही तन्तुओं का बट कम किया हुआ रहता है और वे सीधे बनाये रहते हैं।

शिक्षकों को सूचना:—

१—आन्दोलनों के नियम।

२—घड़ी का मुख्य चक्र, स्वगति दर्शन।

पाठ ग्यारहवाँ

मूठ

लटकनेवाली धुनकी को हाथ की मुट्ठी में पकड़ कर धुना जाता है। धुनकी की डंडी पर उसे मुट्ठी मे पकड़ने योग्य जगह बनाई होती है। चौरस डंडी की यह जगह कुछ गोल बनाई जाती है, जो आसानी से मुट्ठी मे पकड़ी जा सके। इसका महत्व समझ लेना आवश्यक है।

धुनकी को डंडी का एक बिन्दु ऐसा रहता है जिस पर लटकती हुई धुनकी दोनों तरफ समतोल रहती है। यानी उस बिन्दु से दोनों तरफ के डंडी के भागों का वजन समान रहता है। इस बिन्दु को 'समतोल बिन्दु' कहते हैं। मूठ की लम्बाई के ठीक बीच मे यह समतोल बिन्दु रहना चाहिए।

यदि यह बिन्दु बीचमें न हुआ तो धुनकी का एक तरफ का हिस्सा दूसरी तरफ के हिस्से की अपेक्षा अधिक भारी होगा। और धुनते समय उस भारी हिस्से को बराबर उठाते

रखना पड़ेगा। धुनकी की यह मूंठ डंडी को इस तरह उठाते रहने के लिए नहीं है; वह तो धुनकी को नीचे दबाने और धुनने वाले की ओर खींच लेने, इन दो क्रियाओं के लिए है। सच में तो यह मूठ सारी धुनकी को काबू में रखने के लिए ही है। धुनकी को हाथ की मुट्ठी में पकड़ कर ऊपर उठाते हुए धुनते रहना परिश्रम का काम है। इसलिए धनुष में ऐसी रचना की जाती है कि धुनकी स्वतः ऊपर उठ जाय और स्वतः ही पीछे खिंची जाय।

मूठ गोल रहनी चाहिए। यदि उसमें कोण बनाया गया तो वह हाथ को तकलीफदेह होगी। इसलिए उसमें कोण तो रहना ही नहीं चाहिए। वह तो बिल्कुल चिकनी बनानी चाहिए। उसकी मोटाई इतनी हो कि वह हाथ में बिना तकलीफ के पकड़ी जा सके।

मूंठ पंखेके 'ड' बिन्दु से १इञ्च पर रहनी चाहिए (देखिये पृष्ठ ५६)। वह पंखे को सटा कर बिठाई नहीं जानी चाहिए। यदि सटा कर बिठाई जाय तो हाथ बराबर पंखे से लगता रहेगा और इससे रुकावट पैदा होगी। और यदि पंखे से १ इञ्च से अधिक अन्तर पर बिठाई जाय तो एक तो तांत टूटती रहेगी और दूसरे तांत की लम्बाई का कम उपयोग होगा। तांत के टूटते रहने का कारण यह है कि मूठ के सामने ही तांत के हिस्से पर मुठिया से प्रहार किया जाता है। मूठ पंखे से जितनी दूर रहेगी उतनी ही दूर प्रहार होगा। और जहां

प्रहार किया जाता है वहीं ताँत जल्दी टूटती है। ये टूटे टुकड़े अधिक लम्बे रहते हैं। इस तरह ताँत की अधिक हानि होती है। उमी तरह ताँत के जिस हिस्से पर प्रहार किया जाता है, वहाँ से माथे तक ताँत के हिस्से पर रूई धुनी जाती है। यह हिस्सा उतना ही कम लम्बा होगा जितनी मूंठ पंखे से दूर रखी जायेगी।

सारांश:—

१—धुनकी की डंडी पर पंखे से एक इंच के अन्तर पर मूंठ बनाई जाय।

२—मूंठ की लम्बाई ६ इंच हो।

३—मूंठ की लम्बाई के ठीक मध्य मे धुनकी का समतोल बिन्दु रहना चाहिए।

४—मूंठ गोल और चिकनी रहनी चाहिए। कोणाकृति और खुरदरी नहीं रहनी चाहिए।

५—मूंठ इतनी चौड़ी हो कि हाथ की मुट्ठी मे अच्छी तरह पकड़ी जा सके।

शिक्षकों को सूचना:—

१—यंत्र शास्त्र मे मूंठ का रहस्य।

२—व्यवहार में समतोल बिन्दु के उदाहरण।

पाठ बारहवाँ

पंखा

धुनकी में पंखे के आकार का बड़ा महत्व है। धुनकी यदि ४॥ फीट हो तो पंखे की ऊँचाई 'अ आ' ८ इंच की होनी
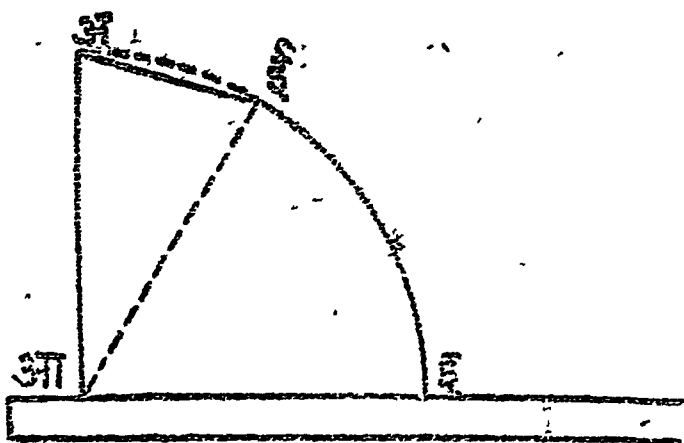
चाहिए; सिवा इसके १ इंच डंडी में घुमाया जाना चाहिए। 'आ इ' का अन्तर भी 'अ आ' के बराबर हो। अर्थात् डंडी के बाहर दिखाई देनेवाला पटरा चौरस हो। केन्द्र 'आ' और त्रिज्या 'आ अ' से 'अ ई' वर्तुल रेखा ७५ अंश का कोण बनते हुये खिंची जाय। इसी तरह उसी त्रिज्या से 'इ' से लेकर 'ई' तक वर्तुल रेखा खींची जाय। 'अई' रेखा जोड़ दी जाय ∠ आ अ ई ७५° का होगा।

अुनकी ३ फीट हो तो पखे की ऊँचाई आ अ ७ इञ्च रखी जाय और बाद मे सब ऊपर की क्रियायें की जाँय। इस तरह से भी कोण आ अ ई ७५° का ही होगा।

ऊपर के आकार में रेखा अ ई और वहाँ का स्थान महत्व का है। सामान्य रूप से समझा जाता है कि अ से इ तक की सारी रेखा गोल है। लेकिन यह गलत है। अ से ई तक की रेखा बिल्कुल सरल होनी चाहिए। गोलाई तो ई से शुरु होनी चाहिए। 'अ' से ही यदि गोलाई बनाई जाय तो कॉर्क-पट्टी के नीचे आत्मा का स्थान निश्चित करने में दिक्कत होगी। और तॉत के साथ बराबर घर्षण होने के कारण कॉर्कपट्टी जल्दी फट जायेगी। इसके अलावा और भी छोटे मोटे दोष पैदा हो जाते हैं। अ ई रेखा यदि सरल और उतरती हुई रहेगी तो आत्मा को आगे पीछे सरकाना और उसका स्थान निश्चित करना आसान हो जाता है। उसके फिसलने का डर नहीं रहता है। कम्प पैदा करने का मुख्य स्थान अ ई रेखा पर ही रहता है। इसलिए अ ई रेखा महत्व की है।

ई इ रेखा तो गोल ही रहनी चाहिए। उसके गोल रहने से अ ई के स्थान पर कॉर्कपट्टी कसकर दबाई जा सकती है।

पंखे का वजन इतना हो जिससे समतोल बिन्दु न बिगड़ जाय। उसकी मोटाई डंडी के बराबर हो। उसका पृष्ट भाग चिकना हो। यदि वह खुरदरा होगा तो उसपर तन्तु चिपक जायेंगे।

धुनकी की डंडी में पंखा मजबूत बैठाना चाहिए। ताँत के खिंचाव से पंखा माथे की ओर खिचा जाता है। यदि वह मजबूत न बैठा हो तो बराबर हिलता रहेगा और उसके कोण बदलते रहेंगे इससे सारा काम बिगड़ सकता है।

धुनकी पर ताँत चढ़ाने के बाद उस ताँत का अ आ रेखा के साथ करीब ८५° का कोण बनता है। अर्थात् ताँत का अ ई के साथ बननेवाला कोण ५° के आस पास रहता है।

सारांश:—

१–बाहर दिखाई देनेवाले पंखे की लम्बाई और चौड़ाई समान हों।

२–३॥ फीट की धुनकी के लिए पंखा ८ इञ्च का हो और ३ फुट की धुनकी के लिए ७ इञ्च का।

३–आत्मा जहाँ बैठाई जाती है वह स्थान महत्व का है।

४–पंखे को डंडी में मजबूत बैठाना चाहिए।

५–पंखा खुरदरा न हो।

६–पंखे के 'अ' कोण की मोटाई में कुछ गहराई बनाई जाती है।

शिक्षकों को सूचना:—

१–भूमिति शास्त्र।

२–बढ़ई गीरी (सोड़ला)।

मत्था

धुनकी में जितना महत्व पंखे को है, मत्थे को भी उतना ही है। धुनकी यदि ३॥ फुटकी हो तो अ आ रेखा २ इञ्च रखी जाय और इसे ही त्रिज्या मान कर एक वृत्त बनाया जाय।

यदि धुनकी ३ फुटकी हो तो यह रेखा १॥। इञ्च रख कर इसी त्रिज्या से एक वृत्त खींचा जाय। अर्थात् इ ई रेखा ३॥ फुटी धुनकी मे ४ इञ्च और ३ फुटी धुनकी में ३॥ इञ्च होगी।

इ आ ई आकृति जो वृत्ताकार होती है चमरपट्टी को तंग खींच कर बिठने के कार्य मे सहायक होती है। डंडी पर से आनेवाली ताँत मोड़ खाती हुई जाते समय मत्थे से घर्षण करती हुई मुड़ी रहती है। इस घर्षण से ताँत के घिस कर टूट जाने की सम्भावना रहती है। इसी लिए माथे पर चमर-पट्टी ठोकी जाती है। यदि इ आ ई गोलाकृति न होती और

लकड़ी कोणदार बनी होती तो प्रत्येक कोण पर ताँत घर्षण करती और वहीं ताँत टूटा करती तथा वहाँ की चमरपट्टी भी बराबर कटती रहती ।

पंखे के अ बिन्दु और मत्थे के इ बिन्दु इन दोनों को ताँत जोड़ती है। ताँत पंखे के अ बिन्दु से जिस प्रमाण में पंखे से अलग होती है उसी प्रमाण में वह मत्थे के इ बिन्दु से मत्थे से अलग रहती है। इसलिए ये दोनों बिन्दु महत्वपूर्ण हैं। इ उ रेखा तिरछी रखने का कारण यह है कि जिससे मत्थे के फूटने की सम्भावना कम हो जाय।' यदि यह सीधी बनाई जाय तो इस से मत्था फूट जाने की अधिक सम्भावना रहती है। वहाँ-पर लकड़ी के रेशों के समानान्तर और सीधे खड़े रहने के कारण से ही ऐसी सम्भावना रहती है।

मत्थे की इ आ ई गोलाकृति की लकड़ी की मोटाई में थोड़ा सा ढालुआ गहरापन रहता है। उसी पर चमरपट्टी ठोकी जाती है। मुठिया की चोट से हिल जानेवाली ताँत मत्थे पर से खिसक कर गिर न जाय इसीलिए गोलाकृति की मोटाई में कुछ ढालुआपन लिए हुए खांचा बना होता है।

पंखे के पास डंडी १॥ इञ्च चौड़ी और १ इञ्च मोटी होती है परन्तु मत्थे के पास वह १ इञ्च चौड़ी और ०॥ इञ्च मोटी होती है। समतोल बिन्दु मुट्ठी के मध्य भाग में हो इसी लिए डंडी उतरती हुई तराशी गई रहती है। और उतरती हुई

तराशते समय वह गोल भी की जाती है। यदि वह चौकोर बनाई जायेगी तो इससे तांत का घर्षण बढ़ जायेगा और वह टूटने लगेगी।

मत्थे पर भी आत्मा लगा कर आवाज न उत्पन्न करने का कारण यह है कि दो स्थानों पर उत्पन्न होनेवाली आवाजों का संघर्ष हो जाने से उनसे उत्पन्न होनेवाली कम्प की संख्या कम हो जायेगी।

सारांशः—

१—मत्थे का भाग गोल हो।
२—गोलाकृति की मोटाई में ढालुआँदार गहरा खांचा बना हो
३—धुनकी यदि ३॥ फुटी हो तो मत्थे की चौड़ाई ४ इञ्च हो और यदि वह ३ फुटी हो तो ३॥ इञ्च हो।

पाठ चौदहवाँ

धुनकी

धुनकी की आकृति निम्न प्रकार की दिखाई देगी। साधारणतः धुनकी लकड़ी की होती है। खोखले बाँस की डंडी बना कर उस पर लकड़ी का मत्था और पंखा बैठाकर धुनकी बनाई जाती है। इसी तरह गोल बाँस को धनुष की तरह मोड़ कर बाँस का ही मत्था और पंखा लगा कर 'कामठा' धुनकी बनाई

जाती है। परन्तु ये दोनों प्रकार की धुनकियाँ बहुत कम प्रचलित हैं।

सूत जितना ही बारीक कातना हो उसी के अनुसार महीन ताँत भी उपयोग में लाई जाती है। और ताँत जिस प्रमाण से बारीक होती है उसी प्रमाण से धुनकी भी छोटी इस्तेमाल की जाती है। साधारणतः ३॥ फुटी धुनकी इस्तेमाल में लाई जाती है। मध्यम अंकों के सूत के लिए यह धुनकी अच्छी है। इस लिए उसको मध्यम पिंजन भी कहते हैं। ६से८ अंको के सूतके लिए ४ फीट लम्बाई की धुनकी भी इस्तेमाल करते हैं परन्तु ३॥ फीट लम्बाई की धुनकी पर भी पूर्ण गति आ सकती है वस्त्र-स्वावलम्बी लोगों के लिए ३ फीट लम्बाई की धुनकी ही अधिक उपयोगी है। उपर्युक्त दोनों प्रकार की मापकी धुनकियाँ समाधान कारक और पूर्ण रूपेण काम देती है।

धुनकी में डंडी का स्थान महत्त्वपूर्ण है। डंडी पंखे की ओर मोटी और चौड़ी तथा मत्थे की ओर पतली और गोल

बनाई हुई रहती है। मूंठ के पास से उसके कोर को मार कर उसे क्रमशः गोल बनाना प्रारम्भ करते है। क्योंकि वहीं से ही डंडी पर ताँत लपेटी जानेवाली होती है। ताँत लपेटा जाने वाला यह भाग सरेस कागज से चिकना कर दिया जाता है। डंडी के मत्थे के पास एक बाँस की खूंटी ठोकी गई रहती है। ताँत उसका चक्कर लगाती हुई मत्थे पर चढ़ाई जाती है यदि यह खूंटी न हो तो ताँत खिसक कर नीचे उतर जायेगी। डंडी को मत्थे की ओर क्रमशः उतरती हुई बनाते वक्त इस बात पर पूरा ध्यान रखना पड़ता है कि धुनकी का समतोल बिन्दु न बिगड़ने पाये।

पंखे पर काँकरपट्टी लगाने के लिए तथा ताँत बाँधने के लिए छिद्र बनाये गये होते हैं उनका चित्र निम्न प्रकार से है।
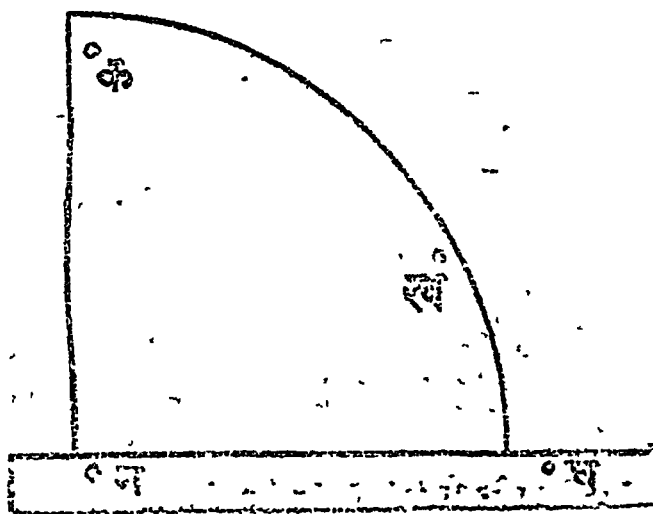
क छिद्र काँकरपट्टी बाँधने का है। यह छिद्र खड़े रेशों पर ही बनाया जाता है। परन्तु वह ऊपर के सिरेसे दूर और नीचे हो। ख छिद्र मे एक बाँस की खूंटी बैठाई गई रहती है। उसके नीचे से काँकरपट्टी को पकड़े रहने-वाली ताँत जाती है और यह ताँत घ छिद्र मे बाँधी हुई रहती है। ग छिद्र ताँत बाँधने के लिए है। ग छिद्र से क छिद्र तक दुहरी ताँत का फांसा बनाया जाता है और उसमें मत्थे पर से आई ताँत अँटकाई जाती है और पंखे पर चढ़ाई जाती है।

धुनकी लटकाने के बाद पंखा जमीन से समान सतह बनाता हुआ रहे, इसके लिए गद्दी का उपयोग किया जाता है। इस गद्दी को बाँधने की व्यवस्था मुट्ठी के ऊपर की गई रहती है। इस गद्दी की वजह से कलाई में जोर भी आता है।

मत्थे पर चमरपट्टी ठोकते समय इस बात का ख्याल रखें कि कीलें बाहर न रहने पायें। यदि कीलें बाहर होंगी तो उससें ताँत घिसा करेगी।

ग छिद्र से जानेवाले फांसे को कसने के लिए उसमें बटनी लगाई जाती है उस से ऐंठते जाने से ताँत तानी जाती है और तंग होती है। उसी प्रकार काँकरपट्टी को कसने के लिए घ छिद्र से आये हुए फाँसे को वटनी से वटते हैं। इसी के द्वारा पंखे पर की काँकरपट्टी तानी जाती है।

सारांशः—

१—तीन और ३॥ फुटी धुनकियाँ उपयोग में लाई जाती हैं।

२—धुनने की क्रिया के लिये ५′ × ७′ वर्गफीट जगह लगती है।

३—धुनकी देख कर खरीदते या लेते समय आगे लिखी बातों पर लक्ष्य देते है।

(अ) पंखा।

(आ) मत्था।

(इ) डंडी।

(ई) समतोल बिन्दु।

(उ) मूंठ।

(ऊ) पखे पर के छेद।

(ए) पंखे पर काँकरपट्टी बाँधने के छिद्र।

(ऐ) पंखे के सिरे पर ढालुआँ खाँच।

(ओ) मत्थे पर उसकी मोटाई में खुदा हुआ ढालुआँ खाँच।

(औ) मत्थे के पास की खूंटी।

शिक्षकों को सूचना:—

१—धुनिये का धंधा।

२—बढ़ईगीरी का धंधा।

पाठ पन्द्रहवाँ

तकली

तकली सूत कातने का एक अत्यन्त प्राचीन साधन है। भेड़ और बकरी पालनेवाले लोगों में जिस तरह भेड़ बकरी के ऊन से सूत कातने का काम तकली द्वारा किया जाता है उसी तरह ढाके की प्रसिद्ध मलमल बनाने जैसा नाजुक काम भी इस से किया जाता है। प्राचीन कालमे बाँस की डंडी बनाकर और पत्थर या मिट्टी वगैरह की चकती लगा कर तकली बनाई जाती थी। आज भी ऐसी तकलियाँ देखने में आती है।

आज कल जो तकलियाँ प्रचलित हैं उनकी डंडी फौलाद की तथा आगे का भाग खाँचेदार और उसकी चकती पीतल की है। सामान्यतः १० से २० अंक तक का सूत कातने के लिए तथा सर्वसाधारण के लिए मिल सकने वाली यह तकली बहुत उपयोगी है।

उत्तम तकली का वजन १। से १॥ तोला होते हुए लम्बाई ६॥ से ६॥। इञ्च तक होती है। चकती का व्यास ३१/३२" अर्थात् १ इञ्च से थोड़ा सा कम होता है। चकती की मोटाई १/८" और उसका वजन एक तोले के आस पास होता है। फौलादी डंडी ६॥ से ६॥। इञ्च लम्बी होती है। उसका व्यास १/१६ इञ्च

तथा वजन ३ से ४ आने भर रहता है। इसके ऊपरवाले सिरे का आध इञ्च भाग चपटा करके वहाँ पर एक $\frac{1}{16}$" गहरा और ९०° का तिकोना खांचा बनाया जाता है। इसको नाक कहते हैं। नाक की लम्बाई चोंच की नोक से ले कर शीर्ष बिन्दु तक २ सूत और चौड़ाई—अर्थात् चपटा दीखने वाला भाग—२ सूत होती है। डंडी को चकती के नीचे वाले भाग को धानी कहते हैं। ५ सूत लम्बा होते हुए उसका अग्रभाग क्रमशः १, २ सूत ढालुआँ नोकदार किया हुआ रहता है।

चकती के बीचोबीच डंडी की मोटाई का ध्यान रख कर उसी के योग्य माप का छिद्र बनाकर, चकती डंडी में जरा तंग बिठाई गई रहती है। अर्थात् डंडी के साथ वह समकोण बनाये रहती है। चकती का निचला छोर थोड़ा सा घिस कर गोलाकार बनाया गया रहता है।

ऊपर लिखी मोटाई की अपेक्षा डंडी यदि बारीक हो तो वह हाथ की उँगलियों में अच्छी तरह पकड़ी नहीं जा सकती। इसलिए उसके योग्य उचित मात्रा में उसके फेरे नहीं हो सकते। इसके विपरीत यदि डंडी मोटी हो तो भी फेरे की संख्या कम होगी। बहुधा डंडी के नाक के नीचे का ६"–१॥' भाग गोल न रख कर थोड़ा सा कोणदार अथवा खुरदरा कर काता जाता है। इससे तकली उंगलियों से फिसलने नहीं पाती। और उसे पूर्ण गति दी जाती है।

चकती का मुख्य काम गति को अधिक से अधिक देर तक टिकाये रखने का है। इस दृष्टि से उसका वजन १ तोले से कम होने से काम नहीं चलता। उसका हवा से कम घर्षण हो इसी के लिए वह डंडी से समकोण बनाते हुए रखी जाती है।

तकली की चकती के नीचे के भाग की लम्बाई महत्वपूर्ण है। क्योंकि सूत लपेटते समय तकली को जमीन के साथ एक विशेष कोण बनाना पड़ता है। अनी की लम्बाई ५ सूत हो यह ऊपर लिखा ही गया है। इसकी अपेक्षा उसे कम रखने से जमीन के साथ कोण बनाते समय वह जमीन से टकराया करेगी और इससे उसकी गति एकदम रुक जाया करेगी। चकती की त्रिज्या लगभग ४ सूत की रहती है। इसलिए अनी की लम्बाई यदि उसकी अपेक्षा कुछ अधिक यानी ५ सूत रखी जाय तो चकती जमीन से नहीं टकरायेगी।

तख्ती पर टिके हुये घूमने वाली नोक को अनी का अग्रभाग कहते हैं। जंघे पर या अन्य तरीकों से गति पाई हुई तकली इसी को अग्रभाग पर घुमाया जाता है। यह भाग नुकीला और डंडी की मध्य रेखा में होना ही अधिक उपयुक्त होता है। भोथे अग्रभाग पर घूमती रहने वाली तकली हिलती डोलती रहती है। अग्रभाग के इधर उधर हिलते और गिरते रहने से कातने में बाधा होती है। तकली को गति देने के बाद उसे दीपक की बत्ती के समान चिकनी और सरल

घूमते रहना अत्यावश्यक है। इसी लिए अग्रभाग को नुकीला बनाया जाता है।

तकली सीधी होनी चाहिए। यदि वह सीधी न हो तो:—

१-वह अधिक गति नहीं दे सकती है;

२-पाई हुई गति को अधिक देर टिकाये नहीं रख सकती;

३-हिलती डोलती रहेगी;

४-सूत के धागे पर अनिष्टकारक तनाव पड़ता रहेगा;

५-धागा लपेटते समय उसका कोण बदलता रहेगा, इत्यादि

ऊपर लिखी सारी बातें सूत कातने के लिए लगने वाली मूलग्राही आवश्यकताओं पर आघात करती हैं। इस लिए वक्रता तकली में मुख्य दोष ठहरी है।

सारांश:—

१-तकली फौलाद की डंडी व पीतल की चकती की बनाई जाती है।

२-तकली खरीदते या लेते समय आगे लिखी बातों पर ख्याल रखना पड़ता है।

(अ) लम्बाई।

(आ) डंडी की मोटाई।

(इ) तकली का सम्पूर्ण वजन।

(ई) चकती का व्यास।

(उ) चकती की मोटाई।

(ऊ) चकती का वजन।

(ए) डंडी का वजन।
(ऐ) नाक की लम्बाई चौड़ाई।
(ओ) नाक के खाँचे का कोण।
(औ) नाक के खाँचे की गहराई। ...
(अं) अनी की लम्बाई।
(अः) अनी का अग्रभाग।
(क) नाक का अग्रभाग।
(ख) तकली का सीधापन।
(ग) चकती का डंडी के साथ बनने वाला कोण।

३–तकली की कीमत सामान्यः २ से २॥ आने होती है।

४–तकली कातने के लिए नीचे लिखे उपसाधनों की आवश्यकता है।

(अ) तकली।
(आ) अटेरन।
(इ) राख।
(ई) पुष्टिपत्र या कागज की तख्ती।
(उ) पूनी।

५–तकली पर कातने के लिए साधारणतः ५'×४' वर्गफीट जगह लगती है।

शिक्षकों को सूचनाः—

१–चकतीका फ्लाइह्वील(Fly wheel) के समान उपयोग
२–बाँस व पत्थर; इन की फौलाद और पीतल से तुलना।
३–कुम्हार की चाक व उसका कार्य।
४–लोहार के समान ही लोहे की खराद (Lathe) पर काम करने का स्थान व कार्य।

पाठ सोलहवाँ

'राख व पुष्टिपंत्र या कागज की तख्ती'

तकली कातते समय राख का उपयोग करना पड़ता है। हाथ और पैर पर होनेवाले पसीने के कारण तकली की डंडी पसीज जाती है और नम हो जाती है। इस वजह से गति देते समय हाथ की पकड़ उस नम और फिसलनेवाली डंडी पर पूर्ण रूपेण नहीं होती। राख की वजह से पकड़ अच्छी तरह बैठती है और तकली को पूरी गति मिलती है। राख से चमड़े की स्वाभाविक चिकनाहट और नमी कम हो कर वह कुछ रुक्ष और शुष्क हो जाता है; इससे तकली की डंडी की पकड़ चमड़े के साथ बढ़ जाती है और हाथ से या अँगुली से दिये गये वेग का पूर्ण उपयोग होता है। सारांश, तकली की डंडी और चमड़े के बीच की फिसलन को दूर करने का काम राख करती है।

राख में रेत या मिट्टी का अंश न हो। वह बिलकुल बारिक और कपड़े में छानी गई हो। यदि मिट्टी और बालू के कण उसमें रह जाँय तो वे चमड़े को हानि पहुँचायेंगे।

लकड़ी के कोयले के बड़े २ टुकड़े धीमे २ जलाये जाँय तो उसे हम निखारा या अंगार कहते हैं। जब यह अंगार ठंडा

होने लगता है तो उस पर राख की तह जमने लगती है। और अन्त में वह क्षार मय बन जाता है। जिस आकार का कोयला हो उसी आकार की यह राख की ढेर बनती है। इस प्रकार से बनी हुई राख अत्यन्त बारीक रहती है। स्वभावतः ही उसमें बालू, मिट्टी, ठिकरे, कंकर वगैरह नहीं होता। इस लोनारी कोयले की राख में क्षार होता है। यही क्षार डंडी पर पंकड़ बढ़ाने में सहायक होता है। इसकी राख सफेद होती है। इसलिए सूत पर इसके रंग का प्रभाव नहीं पड़ता। काली राख का सूत पर काला रंग चढ़ जाता है इससे यह वर्जित समझी जावे।

तकली फर्श पर या जमीन पर टिका कर कातने से उसकी अनी भोथी हो जाती है। आधार-भूमि समान न होने से तकली हिलती रहती है और कभी २ अनी जमीन में घुस जाती है जिससे गति रुक जाती है। ऊपर की अड़चन को दूर करने के लिए पुष्ठिपत्र का उपयोग करते हैं।

पुष्ठिपत्र पर अनी के घूमते रहने से भी उसमें खांच और गड्ढे बन जाते हैं जो क्रमशः बढ़ते ही जाते हैं। उसकी ऐसी दशा हो जाने पर उसे उलट देना पड़ता है या बदल देते हैं।

पुष्टिपत्र के बदले लकड़ी की पटरी का उपयोग करने से उसमें आवाज पैदा होती है। केवल पुष्टिपत्र का ही उपयोग

१६—रास व पुष्टिपत्र या कागज की तख्ती

करने से वह सड़ हवा या कृत्रिम अनिष्ट दवाओं के पड़ने से
मुड़ जाता है और सिकुड़ जाता है। इसलिए इसके नीचे
लकड़ी की पतली पटरी ठोकी जाती है। छिद्र पड़ कर निरुप-
योगी हुए पुष्टिपत्र को बदल दिया जा सकता है। पुष्टिपत्र के
होने से अनी का अग्रभाग शीघ्र भोथा नहीं होता। ऐसे ही
उसके पृष्ठभाग पर खाँच और गढ़े शीघ्र न होने के कारण
तकली की गति भी रोकी नहीं जाती। पुष्टिपत्र अत्यन्त
मोटा होने की आवश्यकता नहीं। वह चौकोर तावे के आकार
का होना चाहिए।

सारांश:—

१—रास में मिट्टी, बालू, ठिकरे और कंकर वगैरह न हों।

२—रास सफेद हो, लोनारी कोयले की हो।

३—चमड़े की स्वाभाविक चिकनाहट व नमी कम करने व तकली पर की पकड़ टिकाये रखने का काम रास से लिया जाता है।

४—पुष्टिपत्र की वजह से अनी भोथी नहीं होने पाती और तकली की गति भी कुंठित नहीं होती।

५—पुष्टिपत्र चौकोर तावे की तरह उसी लम्बाई और चौड़ाई का हो। उसको बहुत मोटा रखने की आवश्यकता नहीं।

६—पुष्टिपत्र के नीचे लकड़ी की पतली पटरी लगाने से न तो वह मुड़ता है न सिकुड़ता है।

शिक्षकों को सूचना:—

१–सोनारी का काम।

२–कागज बनाना।

३–राख में क्षार पदार्थ।

४–राख व पुष्टिपत्रों का व्यवहारों में उपयोग।

५–'राखरंगोली करना' अथवा 'शरीर में विभूति रमाना' इत्यादि; इनसे सम्बन्धित कहावतों का भाषा में प्रचार।

पाठ सत्रहवाँ

तकुआ

तकुआ फौलाद का होता है। साधारण लोहा फौलाद से नरम होता है। इसलिए जल्दी टेढ़ा हो जाता है। फौलाद का तकुआ जल्दी टेढ़ा नहीं होता। इसके अतिरिक्त फौलाद लोहे के मुकाबिले में अधिक लचकदार होता है। सूत का नम्बर तकुए की लम्बाई और मोटाई पर अवलम्बित है। मोटा सूत कातने के लिए तकुआ मोटा और लम्बा लेना चाहिए। और बारीक सूत कातने के लिए पतला व छोटा। साधारणतया नीचे लिखे अनुसार मोटा व लम्बा तकुआ ले सकते हैं:—

सूत का नम्बर	तकुएकी सलाईकी मोटाई	तकुए की लम्बाई
६ से १२	·१२ गेज	८॥ इञ्च
१२ से ४०	·१३ गेज	७ इञ्च
४० से ८०	·१५ गेज	६ इञ्च
८० के ऊपर	·१८ गेज	४ इञ्च

तकुआ बिलकुल सीधा होना चाहिए। सीधा तकुआ यदि टेढ़ा हो जाय तो सूत कातने में कठिनाई होती है। असावधानी से तकुआ टेढ़ा होने की संभावना रहती है। ऊँचे से नीचे गिरने, पाँव या और किसी चीज से दबने या कातते समय जोर पड़ने से तकुए के टेढ़े होने की संभावना रहती है। टेढ़ा तकुआ सूत कातने योग्य नहीं रहता। तकुआ यदि सीधा नहीं है तो उसकी वट देनेवाली नोक थरथराती रहती है। और वह थरथराहट बारीक (महीन) सूत को, बरदाश्त नहीं हो सकती। तकुए की दोनों नोकें यदि उसकी मोटाई की मध्य-रेखा पर हैं और सीध मे हैं तो समझना चाहिए कि तकुआ सीधा है। तकुए की मोटाई सब जगह समान होनी चाहिए। मोटाई गोल होनी चाहिए, कोणाकृति की नहीं। उनके पृष्टभाग पर गढ़े, चपटापन या ऊँचाई नीचाई नहीं होनी चाहिए। दोनों तरफ के घिसे हुए भाग भी समान उतार मे होने चाहिए। यदि ऊपर लिखे दोष तकुए में रह गये तो उसको सीधा करना कठिन होगा।

तकुए की दोनों नोकें उसकी गोलाई की मध्य रेखा पर होनी चाहिए। नोकें न बहुत तीखी होनी चाहिए न मोटी। तीखी नोक धागे के अन्दर घुस कर उसे तोड़ती रहती है और उसके जल्दी टेढ़ा होने की संभावना रहती है। नोक मोटी होने से तकुए पर धागे की पकड़ ठीक नहीं रहती और वह खिसकता रहता है।

तकुए की बट देनेवाली नोक का काम बड़े महत्व का है। वह इधर उधर बिखरे हुए तन्तुओं को इकट्ठा करके उनको बट देती है। इस नोक से धागा तकुए से अलग होता है। यदि हम ध्यान से तकुए की गति और धागे के खिंचाव को देखें तो मालूम होगा कि धागा बराबर तकुए से आगे आने का प्रयत्न करता है। इस तरह धागा निकलता रहने से वह नये धागे के बनने में विघ्न डालता है। तकुए को नोक के पास से घिस देने के कारण वह धागे को बाहर आने से रोकता है। बट देते समय या तकुए की गति धागे को मिलते समय ऐसा मालूम होता है मानो वह नोक धागे को बराबर पकड़ रही है और छोड़ रही है। यदि ये पकड़ना और छोड़ना न हो तो धागे को बट नहीं मिल सकता। इस पकड़ने और छोड़ने के काम में तकुए का घिसा हुआ भाग भी मदद करता है। इसलिए बट देने वाली नोक के पास तकुए को ढालुआँ घिसना चाहिए।

इस घिसे भाग की लम्बाई १। इञ्च से २ इञ्च तक होनी चाहिए। ज्यादा घिसने से नोक के पास का वजन कम हो

जाता है और इस भाग का वजन कम हो जाने से नोक कम थरथराती है।

सारांशः—

१-तकुआ फौलाद का होना चाहिए।

२-सूत का नम्बर उसकी मोटाई और लम्बाई पर अवलम्बित है।

३-तकुआ बिल्कुल सीधा होना चाहिए।

४-तकुए की दोनों नोकें यदि उसकी मोटाई की मध्य रेखा पर हैं और बीच में हैं तो समझना चाहिए तकुआ सीधा है।

५-तकुआ गोल होना चाहिए, कोण आकृति का नहीं होना चाहिए। इसके पृष्ठभाग पर गड्ढे या ऊँच नीच नहीं होना चाहिए।

६-दोनों नोकें न बहुत तीखी होनी चाहिए न मोटी।

७-सूत देनेवाली नोक के बीच से तकुए को १ इंच से २ इंच तक ढलवाँ घिस देना चाहिए।

शिक्षकों को सूचनाः—

१-फौलाद और साधारण लोहे में भेद।

२-सीधी रेखा (ज्यामिति)

पाठ अठारहवाँ

घिरी

सूत को बट लगाने के लिए तकुए को गति देनी होती है। चर्खे में चक्रों द्वारा माल के संयोग से तकुए को गति दी जाती है। तकुए पर जिस जगह माल फिरती है उस जगह घिरी बिठाई जाती है।

घिरी बीड लोहे की होनी चाहिए। पीतल, ताँबा, साधारण लोहा आदि धातुओंके बजाय बीड लोहे की घिरी बिठानेका कारण यह है कि उसमें एक प्रकार का दाना (Grain) होता है जिसके कारण घिरी पर माल की पकड़ अच्छी रहती है। दूसरे धातु जल्दी चिकने हो जाते हैं। बीड के मुकाबिले में दूसरे धातु गरम भी जल्दी होते हैं। बीड आसानी से काटा जा सकता है और मूल्य में भी सस्ता होता है।

घिरी को खराद पर उतारना पड़ता है। वह सच्चा (True) होनी चाहिए। उसके दोनों तरफ के बाहरी भाग उभरे हुए गोल होने चाहिए।

घीरी पर जिस जगह माल फिरती है उस जगह V आकार का गढ़ा बनाना होता है। तकुए पर माल की पकड़

अच्छी रहे इसलिए इसी आकार की खास जरूरत है।

यंत्र शास्त्र मे पट्टे Belts) कई प्रकार के दिखाई पड़ते हैं। दाँतों के चक्र आपस मे एक दूसरे को फिराते हैं। इन को 'गियर व्हील्स' (नतुआ) कहते हैं। इनमे एक प्रकार ऐसो है जो जंजीर या साँकड़ से फिराये जाते हैं। केनवास या चमड़े के पट्टों से भी चक्र फिराये जाते हैं। अपने चर्खों में सूत की डोरी चक्र फिराने के काम मे लाई जाती है। इस पद्धति को 'डोरी के पट्टे की पद्धति' (Rope Belting) कहते हैं। मुख्य चक्र के एक फेरे में अन्य चक्रों के अधिक फेरे हों, इस लिए डोरी के पट्टे की पद्धति विशेप उपयोगी है। परन्तु इस पद्धति में एक दोप है। मुख्य चक्र के एक फेरे मे हिसाब से जितने फेरे तकुए के होने चाहिए उतने नहीं होते। यदि गणित के अनुसार फेरो की अमुक संख्या की आवश्यकता हो तो वहाँ दाँते के चक्र ही काम में लेने चाहिए। डोरी के पट्टे से फेरे कुछ कम होंगे। इसका कारण फिसलन है। इस पद्धति में चक्र से डोरी फिसलने की गुंजाइश रहती है। फिरते २ वह फिसलती है। यह फिसलन जितना कम हो उतना ही अच्छा। इसी लिए घिर्री का खाँचा V आकार का बनाया जाता है।

माल गोल होती है। वह सूत की बनी होती है। V आकार के खाँचे में गोल माल ठीक बैठती है। V आकार के खाँचे मे माल नीचे पेंदे को नहीं छूती। माल खाँचे की दोनों बाजुओं को छूते हुए फिरे तो पकड़ ठीक रहती है। परन्तु

व्यवहार में ऐसा नहीं होता। अतिशय घर्षण होने से V आकार धीरे धीरे U आकार बन जाता है और कुछ दिनों के बाद घिर्री बेकार हो जाती है।

सूत की माल मे स्थिति-स्थापकत्व रहने से V आकार के खाँचे से जाते समय वह दोनों तरफ के उभरे भागों मे दाबी जाती है और चपटी बनती है। उस दाब से निकल जाने के बाद वह पुनः गोल बन जाती है। इस क्रिया का भी माल की घिर्री पर पकड़ बढ़ाने मे उपयोग होता है। घिर्री की यह खाँच अधिक चौड़ी होना इस दृष्टि से हानिकारक है। यह खाँच जितनी चौड़ी होगी उतनी ही फिसलन बढ़ती जायेगी।

तकुए पर घिर्री के बदले साड़ी का भी उपयोग करके काम लिया जाता है। आज तक पुरानी परम्परा से कातने वाले गावों के कारीगरो में साड़ी का ही प्रचार देखने मे आता है। आज कल भी अधिकतर ग्रामीण कतवैये साड़ी का ही उपयोग करते हैं।

घिर्री और साड़ी की तुलना करना आवश्यक है।

अनुक्रम	साड़ी	घिर्री
१	माल फिरने की जगह साड़ी पर शीघ्र गढ़ा पड़ जाता है।	गढ़ा नहीं पड़ता।
२	गढ़ा पड़ जाने से वहाँ की	घिर्री से ऐसा नहीं होता

अनुक्रम	साड़ी	घिर्री
	मोटाई कम हो जाती है। इससे तकुए का फेरा बढ़ता है।	
३	साड़ी घिस जाने से उसे बार बार दुरुस्त करना पड़ता है।	इसमें इस कष्ट से बच जाते हैं।
४	साड़ी की सम्पूर्ण लम्बाई पर माल घूमते रहने का प्रयत्न करती है और सम्भवतः साड़ी से उतर भी जाती है।	घिर्री में ऐसा नहीं होता
५	साड़ी की मोटाई भिन्न २ प्रकार की रह सकती है और उसका असर तकुए के फेरे पर पड़ता है।	घिर्री निश्चित माप की होती है।
६	साड़ी की कीमत कम होने पर भी चलाने में अनेक कष्ट होते हैं।	घिर्री पौन आने में मिलती है।

अनुक्रम	साड़ी	घिर्री
७	साड़ी का सच्चा (True) रहना कठिन है।	घिर्री सच्चा (True) बनती है।
८	साड़ी पर यदि गड्ढा न हो तो उसपर माल की पकड़ रहना कठिन है।	V गड्ढा पहले से ही तैयार किया हुआ रहता है।
९	साड़ी पर माल के एक ही जगह घूमते रहने के लिए दो खूंटियाँ खड़ी की जाती है। जहाँ पर माल का घर्षण बढ़ता है।	घिर्री पर उसकी आवश्यकता नहीं पड़ती।
१०	साड़ी सर्वत्र एक ही मोटाई की बनेगा ऐसी बात नहीं है।	घिर्री निश्चित नाप की होती है।

साड़ी पर शीघ्र गड्ढा पड़ जाने का कारण यह है कि तकुआ के फिरने से साड़ी गर्म हो जाती है। तकुआ खूब वेग से घूमता है। साधारणतः प्रत्येक मिनट में उसके लगभग ३,५०० फेरे होते होंगे। (सूत का अंक १६ रखें व प्रति घंटा ३०० तार की गति रखी जाय और सूत ताने के लिए काता जाय तो

प्रति मिनट २,६०० फेरे होते हैं।) तकुएके इतनी गति से घूमने से, जहाँ माल घूमती है वहाँ साड़ी की जगह गर्म हो जाती है और वह भाग टूटने लगता है। इस प्रकार से शीघ्र ही गढ़ा पड़ जाता है।

घिर्री पर भी यह घर्षण तो होता ही है। परन्तु बीढ़ साड़ी की अपेक्षा बहुत देर से गर्म होता है इसलिए यहाँ पर शीघ्र गढ़े नहीं पड़ते। किन्तु अधिक घर्षण होने से यह V आकार इस U आकार का बन जाता है और आगे चल कर घिर्री टूट भी जाती है। परन्तु घिर्री के टूटने के समय तक उस पर बहुत ज्यादा सूत काम किया जाता है।

घिर्री के इस V आँचे में यदि कोई खुरदुरा अंकुश रह जाय तो इससे माल के टूटने का अधिक भय रहता है।

तकुए पर साड़ी अथवा घिर्री में से कोई भी वस्तु लगानी ही पड़ती है। इसके बिना काम नहीं चलता क्योंकि डोरी की सहायता से तकुआ घुमाते समय उसपर आनेवाले दबाव, और उसका डोरी से जहाँ स्पर्श होता है वहाँ की जगह के क्षेत्रफल का विचार करना पड़ता है। इस दृष्टि से विचार करने पर माल जहाँ फिरता है वह भाग और भागों की अपेक्षा मोटा ही रखना पड़ता है।

सारांश:—

१—घिर्री [illegible] नामक धातु (बूंदा या ढलुआ लोहा) की बनती है।

२-घिरी समाहित यानी सच्चा (True) बनानी होती है। इसलिए उसे लोहे की खराद पर तैयार करना पड़ता है।

३-माल घूमने की जगह घिरी पर V आकार की खाँच बनाई हुई रहती है। U आकार की खाँच निरुपयोगी होती है।

४-इस V आकार के बाहरी किनारे बहिर्वक्र गोलाकृति (बाहर उभरे) होते हैं।

५-लकड़ी से भी काम किया जाता है। परन्तु तुलना में घिरी ही अधिक उपयोगी है।

६-घिरी की कीमत पौन आने के आस पास होती है।

७-घिरी के V खाँचे में दरार रहना ठीक नहीं।

८-घिरी इस प्रकार दिखाई देती है।

शिक्षकों को सूचना:—
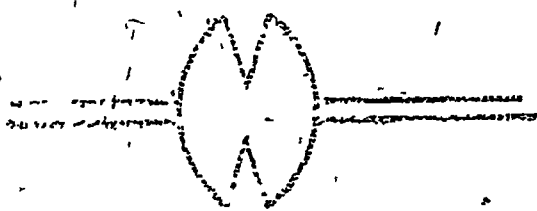
१-Cast Iron (ढुंग या ढलुआ लोहा) Wrought Iron (पिटुआ लोहा) व Steel (फौलाद); इन में एक का दूसरे से अन्तर और इनका उपयोग।

२-घर्षण के नियम व प्रकार।

३-घर्षण और स्निग्धता, इनका व्यवहारों में दृष्टान्त।

पाठ उन्नीसवाँ

चमरख

तकुआ जिन दो आधारों पर घूमता है उन्हें चमरख कहते हैं। तकुए को यदि धुरी मानें तो चमरख उसका धुराधर (आधन, खामी, बेअरिंग्) होगा।

चमरख अनेक वस्तुओं से बनाया जाता है। सूत की रस्सी, नारियल की रस्सी, मूंज की रस्सी, मक्के की खुखुन्डी, मक्के के दानो के ऊपरी छिलके, कच्चे अथवा कमाये हुये चमड़े, ताँत और कपड़ेकी पट्टी इत्यादि ऐसी अनेक वस्तुओं का उपयोग चमरख बनाने के लिये करते हैं।

चमरख जिस वस्तु का बनाना हो उसका निरीक्षण करते समय निम्नांकित चार पाँच महत्वपूर्ण बातों का विशेष ध्यान रखना पड़ता है।

(१) उस चीज का ऊपरी भाग चिकना है या नहीं।

(२) उसमे तेल सोख लेने की शक्ति है या नहीं।

(३) घर्षण (रगड़) सहन करने की शक्ति है या नहीं।

(४) तकुए की धातु की अपेक्षा वह चीज नरम है या नहीं।

(५) वह कोई धातु तो नहीं है क्योंकि धातु के कारण आवाज होती रहेगी।

भिन्न भिन्न प्रान्तों में स्थानीय प्राप्य वस्तुयें चमरख के लिए उपयोग में लाई जाती हैं। जिस चीज का चमरख बन या जाय वह यदि चिकनी होगी तो तकुआ उसपर आसानी से घूमता रहेगा; नहीं तो उसके चिपक कर बैठ जाने अथवा घर्षण करते हुए घूमने की सम्भावना है। यदि घर्षण करते हुए घूमता रहेगा तो चमरख शीघ्र ही टूट जायेगा।

तकुए के घुमाव की गति के कारण जो गर्मी पैदा होती है, वह चमरख को घिस डालती है। चमरख वाली चीज यदि तेल सोख कर रख लेनेवाली होगी तो जैसे जैसे तकुआ गर्म होता जायेगा वैसे वैसे उसे उसी से तेल मिलता जायेगा। इस तरह से कुछ देर तक उसे अपने आप तेल मिलता रहेगा। घर्षण पानेवाला भाग तेल के कारण थोड़े प्रमाण में ठंडा ही रहता है।

चमरख के लिए चीमड़ (जल्द न टूटने वाली) वस्तु इस्तेमाल करना आवश्यक है नहीं तो उसे भरपूर तेल मिलता रहे तो भी वह शीघ्र ही कट जायेगा। चमरख यदि धातु का ही बनावें तो उसपर डाला हुआ तेल शीघ्र राख जायेगा तथा रगड़ के कारण गर्मी बढ़ने से धातु शीघ्र घिस जायेगा। इस के अतिरिक्त आवाज भी आती रहेगी जो खलल देती है।

चमरख पूर्ण गोल अर्ध गोल अथवा एक अर्ध गोल और दूसरा पूर्ण गोल छिद्र का इस्तेमाल किया जाता है।

उसके साथ सावली चक्र में पूरी गोल छिद्र का चमरख इस्तेमाल किया जाता है और यरवदा चक्र में अर्ध गोलाकार। यरवदा चक्र में आँचे पर लगी डोरी पर तकुआ फिरता है। इस स्थिति में तकुआ बाहर से खुला रहता है।

सावली चक्र में बाँस की कमची में चौकोर चमड़े का टुकड़ा फंसा कर चमरख का उपयोग करते हैं। चमड़े के इन टुकड़ों को आगे पीछे खिसका कर योग्य स्थान शीघ्रता से ढूंढा जा सकता है। इसे घर ही पर बना लेना आसान है।

बाँस का ५ या ६ इञ्च लम्बाई का एक पट्टा लें जिसकी एक ओर गांठ हो। इस गांठ के विरुद्ध वाले सिरे से गांठ तक बीचोंबीच में चीर डालें। परन्तु गांठ न फटने पावे। इस प्रकार इस बांस की कमची के चीरे हुए भाग में चमड़े के चौकोर टुकड़े को चढ़ावें। इस टुकड़े के अन्दर इतनी गोलाई का छेद करें जिसमें तकुआ आसानी से घूम सके। इस तरह तैयार की हुई कमची मांढ़िया के किसी भी खंभे में चढ़ाने से मजबूती के साथ बैठेगी। क्योंकि कमची में चमड़े का टुकड़ा लगाने से चिरा हुआ भाग अधिक फैलता है। इस प्रकार फैले हुए भाग को एकत्र दाब कर खंभे में ले जाने से अन्दर जाने पर वह कमची स्वाभाविक रूप से फैलने का कार्य करती ही रहती है। इस कारण से खम्भे के अन्दर गई हुई कमची का भाग उसमें मजबूती से बैठता है। कमची को यदि आवश्यकतानुसार कुछ आगे पीछे करें तो भी वह ढीली नहीं होती।

सारांशः—

१—तकुआ जिस आधार पर घूमता है उसे चमरख कहते हैं।

२—चमरख अनेक वस्तुओं का बनाते हैं।

३—तेल सोख लेने व घर्षण सहन करने की शक्ति चमरख के लिए चुनी वस्तु में होना चाहिए।

४—तकुए की धातु की अपेक्षा चमरख वाली चीज का नरम होना जरूरी है।

५—यरवदा चक्र मे डोरी अथवा ताँत का अधखुला चमरख इस्तेमाल किया जाता है।

६—सावली अथवा मगन चर्खे में चमड़े का टुकड़ा बाँस की कमची में लगा कर उसमें तकुआ लगाया जाता है।

शिक्षकों के लिए सूचनाः—

१—तेल सोख लेने वाले और उसकी पुष्टि करने वाले दूसरे उदाहरण;—लालटेन।

२—संघर्ष व उष्णता;—बड़वानल ।

पाठ बीसवाँ

फिरकी, चकली या दिमरका

कात कर तैयार किया हुआ धागा तकुए पर व्यवस्थित
रूप से लपेटने के लिए फिरकी के समान उपयोगी दूसरी कोई
वस्तु नहीं है। इसका दूसरा नाम भरनी है। क्रिया के
आधार से तकुए पर सूत भरा जाता है इसलिए इसे भरनी
कहते हैं। इसी प्रकार सूत लपेटते हुए जहाँ से धागा वापस
फिराया जाता है, उसे फिरकी कहते हैं।

फिरकी हलकी से हलकी वस्तु की बनाई जानी चाहिए।
नहीं तो उसे फिराना तकुए की शक्ति के बाहर का काम होगा।
इसलिए पीतल, पत्थर की स्लेट अथवा इसी प्रकार की अन्य
वस्तु की फिरकी बनाने की अपेक्षा अल्युमिनियम के समान
हल्की वस्तु की फिरकी बनाना ठीक है। इसकी अपेक्षा
ग्रामोद्योग और स्वावलम्बन की दृष्टि से सूखी हुई तितलौकी
की छाल अथवा सेमल के वृक्ष के काँटे की फिरकी बनाना और
भी अच्छा है। लौकी अथवा काँटे की फिरकी तकुए पर
घूमती हुई रख कर खरादी जा सकती है। फिरकी खराद
लेने पर अच्छा काम देती।

फिरकी के बीच का छिद्र बिल्कुल मध्यभाग में हो। यदि

ऐसा नहीं होगा तो उसपर लपेटे गये सूत की परिधि और उस की परिधि का मेल नहीं बैठेगा तथा उसपर लपेटे हुए सूत को वह बाहर फेंक देगी। इसी प्रकार फिरकी तकुए के साथ ठीक समकोण बनाती हुई खड़ी होनी चाहिए। उसका सारा ऊपरी भाग तकुए के साथ समकोण बनाता हुआ हो। यदि वह ऐसा न होगा तो (१) फिरकी घूमते हुए हवा से अधिक घर्षण करेगी (२) इस वजह से तकुए की गति पर अनिष्ट परिणाम होगा और (३) सूत की कुकड़ी और फिरकी की परिधि का मेल नहीं होगा। इस प्रकार से लपेटा हुआ सूत बाहर निकल जाया करेगा।

फिरकी का व्यास साधारण रूप से १ इञ्च का होता है। अधिक होने पर उसपर अपने आप ही अधिक सूत लपेटा जायेगा। तकुए पर उसकी शक्ति के बाहर अधिक वजन का सूत लपेटा गया तो अधिक वजन के कारण उसकी गति मन्द हो जायेगी। बारीक सूत के लिए कम व्यास की फिरकी इस्तेमाल की जाय।

फिरकी का छिद्र तकुए की सींक की अपेक्षा चौड़ा न हो। यदि बहुत बड़ा होगा तो तकुए के समकोण में फिरकी की सतह नहीं आ सकती तथा इस प्रकार सूत का कुकड़ा फिरकी की परिधि के बराबर नहीं बन सकता। छिद्र बड़ा होने के कारण फिरकी और कुकड़ी के बीच अन्तर पड़ने की सम्भावना रहती है। यदि वह बड़ा हो तो फिरकी के तकुए

पर आगे पीछे सरकने का भय भी रहता है।

फिरकी के मध्यभाग में जो छिद्र होता है और जिसमें तकुआ घुमाया जाता है उस छेद के नजदीक फिरकी की मोटाई अधिक हो और फिरकी की परिधि की ओर क्रमशः ढालुवाँ होत जाय। फिरकी की परिधि चाकू की धार के समान उतार लिए हुए धार ही के समान बारीक होवे। इससे एक लाभ यह होता है कि तकुए पर फिरकी की पकड़ मजबूत होती है। ऐसी उतार लाने के लिए लौकी की छाल अथवा दीमक का काँटा ही अधिक उपयोगी होता है। अल्युमिनियम की फिरकी में उपरोक्त गुण लाना कठिन है। अल्युमिनियम की फिरकी चढ़ा हो जाने का भय इसी वजह से रहता है। छिद्र के नजदीक की फिरकी की मोटाई अधिक होने पर छिद्र बड़ा होने की सुविधा नहीं रह जाती। फिरकी यदि परिधि की ओर ढालुवाँ और उतार लिए हुए होगी तो उसका हवा से कम घर्षण होता है तथा तकुआ हलका फिरने में मदद मिलती है।

तकुए पर फिरकी लगाने का स्थान भी निश्चित होता है। तकुए की लम्बाई के ठीक मध्य भाग में फिरकी बैठाई जावे। यदि सूत विशेष बारीक कातना हो तो फिरकी ऐंठन देनेवाली नोक की ओर आधा इञ्च खिसका कर बैठावें। अर्थात् ऐंठन देनेवाली नोक से चकती तक की लम्बाई बाकी भाग की अपेक्षा आध इञ्च कम रखी जावे।

फिरकी की परिधि का ऊपरी भाग चिकना हो। यदि वह खुरदरा होगा तो फिरकी से घिसता हुआ लपेटा जानेवाला सूत अटकता रहेगा अथवा बाहर निकल जाया करेगा। तकुए पर बिना फिरकी के भी सूत काता और लपेटा जाता है। देहातों से कुछ कातनेवाले ऐसे ही कातते भी हैं। इस तरीके से काता गया सूत परेतते समय अत्यधिक कुशलता की आवश्यकता रहती है। क्योंकि कुकड़ी के ऊँचे भाग के पीछे गया धागा परेतते समय अटकता है और टूटता जाता है। परेते पर गतिपूर्वक सूत परेतने के लिए फिरकी की आवश्यकता बढ़ जाती है।

सारांशः—

१–फिरकी हल्की हो।
२–व्यास १ इञ्च हो।
३–छिद्र बीचोंबीच में हो।
४–छिद्र के आसपास उसकी मोटाई अधिक हो और परिधि की ओर बारीक होता जाना चाहिए।
५–तकुए की लम्बाई के मध्यभाग में फिरकी लगावें।
६–फिरकी का हर भाग चिकना हो।
७–फिरकी कागज के गत्ते की न बनायें।
८–फिरकी का छिद्र तकुए की सीक की अपेक्षा अधिक चौड़ा न हो।
९–अल्युमिनियम की फिरकी एक पैसे में एक मिलती है।

शिक्षकों के लिए सूचनाः—

१–तीकी की फिरकी—ग्रामोद्योग दृष्टि।
२–वृत्त में छिद्र—भूमिति।

पाठ इक्कीसवाँ

मणिया कंठी

सावली चक्र या मूल पद्धति के सभी चक्रों में तकुए के ऊपर मणि का बहुत महत्व है। यरवदा चक्र में भी घिर्री के अगल बगल रहते हुए घिर्री को मोढ़िया के खम्भों से घर्षण न होने देने का काम चमड़े की पट्टी करती है। यही काम मणि भी करती है। मोढ़िया के दोनों खम्भों के बीचोबीच घिर्री घूमती रहे और उसका मोढ़िये के खम्भों से घर्षण न होने पावे, इसी लिए मणि का उपयोग करते हैं। मणि चमरख के चमड़े से घर्षण करती रहती है और घिर्री का घर्षण नहीं होने देती। घिर्री का लकड़ी से होनेवाले घर्षण की अपेक्षा मणि का चमड़े से होनेवाला घर्षण कम हानिकारक होता है। किसी भी घर्षण के कारण चर्खा भारी घूमता है, यानी हानि होती है। परन्तु जिससे कम से कम हानि हो वही करना उत्तम है।

सूत कातते हुए तकुए पर कातने वाले की तरफ दबाव पड़ता है। इस दबाव के कारण घिर्री मोढ़िया के खम्भे की ओर खिंच जाती है। मणि न हो तो यह खम्भों पर घिस लगती है। इसी लिए मणि की जरूरत है।

मणि का जो भाग चमड़े से घर्षण करता है वह अत्यन्त चिकना हो। उसके घर्षण पानेवाले भाग की सतह समकोण हो।

मणि हल्की हो, भारी मणि को लेकर घूमते रहना तकुए के लिए बोझ ही होगा।

मणि हलकी रहते हुए उसका घर्षणपानेवाला भाग चिकना किया जा सके ऐसी वस्तु ढोढ ही है। इसे कहीं २ देवबला भी कहते हैं। इस ढोढ की मणि ½" लम्बाई की बनावें। इसकी अपेक्षा अधिक लम्बाई की मणि लेकर उसका वजन अकारण ही न बढ़ावें। घिर्री से लेकर चमरख तक करीब ४, ५ सूत लम्बी मणि इस्तेमाल करना ठीक नहीं है।

मणि तकुए पर ऐसे स्थान पर ठोस बैठाई जाय। इसे हिलता डुलता न रखें। घूमता हुआ रहने से तकुआ ऊपर नीचे होता रहेगा अथवा मणि के खोखले भाग में तकुआ घूमते हुए अटकता रहेगा।

मणि तकुए पर ऐसे योग्य स्थान पर ठोस बैठाई जाय जिससे घिर्री मोढ़िया के दोनों खम्भों के बीचोबीच फिरती रहे। माल के स्वाभाविक स्थान ढूंढ़ लेने के बाद फिरकी लगे हुए चमरखे और घिर्री के बीच चमरख से लगाकर इसे ठोस बैठावें। मणि बैठाने का स्थान वह हो जहाँ चमरख से मणि का घर्षण कम से कम होता हो।

मणि के अन्दर बनाया हुआ छिद्र उसकी गोलाई के ठीक मध्य में हो। नहीं तो घूमते हुए मणि का एक ओर का वजन बढ़ जायेगा और तकुआ के घूमने में उसके कारण बाधा पड़ेगा।

शहरों में जहाँ मणि मिलने में कठिनाई होती है वहाँ शीशे की ही मणि लगा कर काम निकालते हैं। परन्तु शीशे का वजन ढोंढ़ की अपेक्षा भारी होता है।

मणि के बदले में उसकी जगह सूत लपेटना ठीक नहीं है। क्योंकि गोंद के द्वारा लपेटा हुआ सूत चमड़े से घिसकर गर्म होता है और इस तरह उसी के सम्बन्ध से गोंद पतला हो जाता है। इससे सूत के ऊपर की उसकी पकड़ नहीं के बराबर हो जाता है और सूत छूटने लगता है। वेग से घूमनेवाले तकुए के घर्षण की वजह से यह लपेटा हुआ सूत टूटता है और इस प्रकार चमरख से उसका घर्षण बढ़ता है तथा कभी २ तकुआ घूमता भी नहीं है।

सारांशः—

१–घिरीं का घर्षण मोढ़िया के खम्भों से न हो इसलिए मणि लगाते हैं।

२–मणि का चमड़े से घिसा जानेवाला भाग अत्यन्त चिकना हो।

३–मणि हल्की हो।

४–मणि ¼ इञ्च लम्बी हो; वह तकुए पर ठोस बैठाई जाय।

५–मोढ़िया के दोनों खम्भों के बीचोबीच घिर्री फिरती रहे; इस तरह फिरकी लगे हुए चमरख और घिर्री के बीच चमरख से सटा हुआ मणि को ठोस बैठावें।

६–मणि का छिद्र उसकी गोलाई के बीचोबीच बनावें।

७–गोंद से सूत लपेट कर उसका मणि के समान उपयोग करना ठीक नहीं।

शिक्षकों के लिए सूचना:–

१–ढोंढ़ का व्यवहार में उपयोग।

२–ढोंढ़ के पैदा होने की जगह।

पाठ बाईसवाँ

मोढ़िया या मोहरा

मोढ़िया शब्द गुजराती से मराठी में आया और अब हिन्दी में भी लगभग सब जगह यह रूढ़ शब्द बन गया है। मराठी में इसे कहीं २ मुसके और हिन्दी में मोहरा भी कहते हैं। इसके कुछ भाग को मराठी में खाहुल्या कहते हैं।

तकुआ जिन दो खम्भों के आधार पर घूमता है उसे मोढ़िया कहते हैं। मोढ़िया में दो खम्भे और दो चमरखों का समावेश होता है। केवल दो खम्भों को ही मोढ़िया नहीं कहते हैं।

मोढ़िया अनेक प्रकार के हैं और हो सकते हैं। मोढ़िया में दिन प्रति दिन होती गई तबदीलियों का स्वरूप नीचे के दिये गये क्रमों से प्रकट होगा।

(१) पुराने चर्खों में दोनों खम्भे चर्खे की छोटी फरई या पिढ़ई में मजबूत व ठोस बैठाये हुए मिलते हैं। इन ठोस बैठाये हुए खम्भों में ठोस चमरख लगाकर काता जाता था।

(२) साबली चक्र में, एक ही स्थान पर ठोस जड़ा परन्तु स्प्रिंग की वजह से आवश्यकतानुसार आगे पीछे सरक सकने वाला मोढ़िया।

(३) यरवदा चक्र में आगे पीछे हिलनेवाला और यदि आवश्यकता हो तो आगे पीछे सरक सकनेवाला मोढ़िया।

(४) किसान चक्र में हिलनेवाला, सरकनेवाला और यदि जरूरी हो तो दायें बाँयें मोड़ कर कोण बना लेनेवाला मोढ़िया।

किसान चक्र में लगाया हुआ मोढ़िया आज सब दृष्टि से लाभदाई और उपयोगी दिखाई देता है।

मोढ़िया साधारण तौर से ३ से ४ इन्च ऊँचा व २॥ से ३ इन्च तक चौड़ा होता है। उसकी मोटाई १ इन्च के आस-पास होती है। उसके दोनों खम्भों का अन्तर १ इन्च की अपेक्षा अधिक नहीं रखा जाता।

यदि सावली चक्र में अमाल पर से माल फिसलने लगे तो भी अमाल सूत या अन्य रस्सी की होने के कारण माल उस पर कस कर बैठती है। इसी से वह प्रमाण में बहुत कम फिसलती है।

अमाल तंग बाँधी जाय तो स्प्रिंग का अच्छा उपयोग होता है।

अमाल के लिए खूब मोटी रस्सी लें तो उससे स्प्रिंग कम मिलेगी। इसलिए प्रमाणापेक्षा अमाल के लिए अधिक मोटी रस्सी इस्तेमाल न की जाय।

सारांश :—

१–पंखड़ी वाले चर्खे में अमाल पर से ही माल को घूमने की सुविधा होती है।

२–अमाल की डोरी :—

(अ) चीमड़ हो।

(आ) एक सूत के आसपास की मोटाई की हो।

(इ) मजबूत और वट वाली हो।

३–माल का चक्र पर न फिसलना, अमाल में मिलने वाली स्प्रिंग के कारण सम्भव होता है।

४–ताँत, नारियल और मूंज की रस्सी, बकरी के बाल की रस्सी और सूत की रस्सी अमाल के लिए इस्तेमाल की जाती है।

मोढ़िया अनेक प्रकार के हैं और हो सकते हैं। मोढ़िया में दिन प्रति दिन होती गई तबदीलियों का स्वरूप नीचे के दिये गये क्रमों से प्रकट होगा।

(१) पुराने चर्खों में दोनों खम्भे चर्खे की छोटी फरई या पिढ़ई में मजबूत व ठोस बैठाये हुए मिलते हैं। इन ठोस बैठाये हुए खम्भों में ठोस चमरख लगाकर काता जाता था।

(२) सावली चक्र में, एक ही स्थान पर ठोस जड़ा परन्तु स्प्रिंग की वजह से आवश्यकतानुसार आगे पीछे सरक सकने वाला मोढ़िया।

(३) यरवदा चक्र में आगे पीछे हिलनेवाला और यदि आवश्यकता हो तो आगे पीछे सरक सकनेवाला मोढ़िया।

(४) किसान चक्र में हिलनेवाला, सरकनेवाला और यदि जरूरी हो तो दायें बाँयें मोड़ कर कोण बना लेनेवाला मोढ़िया।

किसान चक्र में लगाया हुआ मोढ़िया आज सब दृष्टि से लाभदाई और उपयोगी दिखाई देता है।

मोढ़िया साधारण तौर से ३ से ४ इञ्च ऊँचा व २॥ से ३ इञ्च तक चौड़ा होता है। उसकी मोटाई १ इञ्च के आसपास होती है। उसके दोनों खम्भों का अन्तर १ इञ्च की अपेक्षा अधिक नहीं रखा जाता।

यदि सावली चक्र में अमाल पर से माल फिसलने लगे तो भी अमाल सूत या अन्य रस्सी की होने के कारण माल उस पर कस कर बैठती है। इसी से वह प्रमाण में बहुत कम फिसलती है।

अमाल तंग बाँधी जाय तो स्प्रिंग का अच्छा उपयोग होता है।

अमाल के लिए खूब मोटी रस्सी लें तो उससे स्प्रिंग कम मिलेगी। इसलिए प्रमाणापेक्षा अमाल के लिए अधिक मोटी रस्सी इस्तेमाल न की जाय।

सारांश :—

१–पंखड़ी वाले चर्खे में अमाल पर से ही माल को घूमने की सुविधा होती है।

२–अमाल की डोरी :—

(अ) चीमड़ हो।

(आ) एक सूत के आसपास की मोटाई की हो।

(इ) मजबूत और वट वाली हो।

३–माल का चक्र पर न फिसलना, अमाल में मिलने वाली स्प्रिंग के कारण सम्भव होता है।

४–ताँत, नारियल और मूंज की रस्सी, बकरी के बाल की रस्सी और सूत की रस्सी अमाल के लिए इस्तेमाल की जाती है।

पाठ चौबीसवाँ

माल

तकुए को घुमाने के लिए माल की आवश्यकता है। चर्खे में माल की योजना इसलिए की जाती है कि मुख्य चक्र के घूमने के साथ तकुआ घूमने लगे। भिन्न २ आकार प्रकार के चर्खों में भिन्न २ प्रकार की माल इस्तेमाल की जाती है। यरवदा चक्र में मुख्य चक्र और गति चक्र के बीच वाली माल बहुत ही मोटी रहती है। इतनी ही अथवा इसकी अपेक्षा थोड़ी मोटी माल सावली चक्र में मुख्य चक्र और गति चक्र के बीच लगाई जाती है। गति चक्र पर से तकुए पर आनेवाली माल उस माल की अपेक्षा बारीक होती है जो मुख्य चक्र पर से तकुए पर आती है। मगन चर्खे में मुख्य चक्र पर से तकुए पर आनेवाली माल थोड़े प्रमाण में अधिक मोटी रखनी पड़ती है। चर्खा हल्का या भारी चलने पर माल की मोटाई का अधिक असर पड़ता है। आवश्यकता से अधिक मोटी माल से चर्खा भारी चलता है तथा इसके विपरीत जरूरत की बनिस्बत बारीक माल से वह हल्का घूमता है। माल की इस मोटाई और बारीकी के कारण घिर्री पर उसकी पकड़ पर असर पड़ता है। बारीक माल का घिर्री के कम क्षेत्रफल पर ही स्पर्श होता है, इसलिए उसकी फिसलन बढ़ती है। इसी वजह से चर्खा हल्का घूमने लगता है।

चिकनाहट की वजह से उसकी पकड़ चक्र पर पूर्ण रूप से नहीं हो सकती।

माल टूटने का कारण :—(१) अधिक तंग करके बाँधना (२) प्रमाण की अपेक्षा बारीक इस्तेमाल करना (३) कड़ी अथवा नरम माल इस्तेमाल करना (४) चक्र में खाँचे पर खुरदरा रहना।

सारांश :—

१–चर्खे में चक्र को घुमाने के लिए जो डोरी इस्तेमाल करते हैं उसे माल कहते हैं।

२–माल तिहरी हो, दुहरी, चौहरी अथवा ६ लर वाली न हो।

३–माल कड़ी अथवा नरम न हो।

४–माल चीमड़ और मजबूत हो।

५–गति-चक्र वाले चर्खे में एक बारीक माल होती है और दूसरी मोटी।

शिक्षकों को सूचना :—

१–सूत की डोरी और घास की डोरी.

२–डोरी का व्यवहार में उपयोग।

३–डोरियाँ बनाने का धंधा।

पाठ चौबीसवाँ

माल

तकुए को घुमाने के लिए माल की आवश्यकता है। चर्खे में माल की योजना इसलिए की जाती है कि मुख्य चक्र के घूमने के साथ तकुआ घूमने लगे। भिन्न २ आकार प्रकार के चर्खों में भिन्न २ प्रकार की माल इस्तेमाल की जाती है। यरवदा चक्र में मुख्य चक्र और गति चक्र के बीच वाली माल बहुत ही मोटी रहती है। इतनी ही अथवा इसकी अपेक्षा थोड़ी मोटी माल सावली चक्र में मुख्य चक्र और गति चक्र के बीच लगाई जाती है। गति चक्र पर से तकुए पर आनेवाली माल उस माल की अपेक्षा बारीक होती है जो मुख्य चक्र पर से तकुए पर आती है। मगन चर्खे में मुख्य चक्र पर से तकुए पर आनेवाली माल थोड़े प्रमाण में अधिक मोटी रखनी पड़ती है। चर्खा हल्का या भारी चलने पर माल की मोटाई का अधिक असर पड़ता है। आवश्यकता से अधिक मोटी माल से चर्खा भारी चलता है तथा इसके विपरीत जरूरत की बनिस्बत बारीक माल से वह हल्का घूमता है। माल की इस मोटाई और बारीकी के कारण घिर्री पर उसकी पकड़ पर असर पड़ता है। बारीक माल का घिर्री के कम क्षेत्रफल पर ही स्पर्श होता है, इसलिए उसकी फिसलन बढ़ती है। इसी वजह से चर्खा हल्का घूमने लगता है।

चिकनाहट की वजह से उसकी पकड़ चक्र पर पूर्ण रूप से नहीं हो सकती।

माल टूटने का कारण :—(१) अधिक तंग करके बाँधना (२) प्रमाण की अपेक्षा बारीक इस्तेमाल करना (३) कड़ी अथवा नरम माल इस्तेमाल करना (४) चक्र में खाँचे पर खुरदरा रहना।

सारांश :—

१–चर्खें में चक्र को घुमाने के लिए जो डोरी इस्तेमाल करते हैं उसे माल कहते हैं।

२–माल तिहरी हो, दुहरी, चौहरी अथवा ६ तार वाली न हो।

३–माल कड़ी अथवा नरम न हो।

४–माल चीमड़ और मजबूत हो।

५–गति-चक्र वाले चर्खें में एक बारीक माल होती है और दूसरी मोटी।

शिक्षकों को सूचना :—

१–सूत की डोरी और घास की डोरी

२–डोरी का व्यवहार में उपयोग।

३–डोरियाँ बनाने का धंधा।

पाठ पच्चीसवाँ

गति चक्र

गति चक्र का यह नाम गति शब्द से ही पड़ा है। गति में जो वृद्धि करे वह है गति चक्र। परन्तु इसका स्वरूप इतना मर्यादित नहीं है। वह एक मध्यवर्ती चक्र है। गति में फरक करने का काम वह बीच में रह कर करता रहता है। मध्यवर्ती चक्र से जिस प्रकार गति बढ़ाई जा सकती है उसी प्रकार उसे कम भी किया जा सकता है। बादली चक्र या परखणी चक्रों में एकमात्र गति बढ़ाने के लिए ही गति चक्र का उपयोग किया जाता है। इसी लिए उसे गति चक्र कहते हैं।

तकुए का फेरा बढ़ाने के लिए चर्खे के मूल चक्र और तकुए के बीच उसे (गतिचक्र को) कहाँ बैठावें इस विषय में यंत्र-शास्त्र के दो नियम हैं।

(१) यदि गति देनेवाले चक्र से गति पानेवाले चक्र को पट्टा अथवा डोरी के द्वारा गति मिलती हो तो उन दोनों चक्रों का अन्तर उन्हीं दोनों चक्रों की त्रिज्याओं के परस्पर अन्तर से कम से कम तीन गुना होना चाहिए।

(२) दो चक्रों के बीच का अन्तर जितना ही ज्यादा होता है उतना ही डोरी अथवा पट्टे की पकड़ ज्यादा होती है

और यह पकड़ जितनी ही ज्यादा होती है उतनी ही इसकी अपेक्षित गति में पड़नेवाला फरक कम होता है (यदि दोनों चक्र समान व्यास के होंगे तो वह उपर्युक्त नियम के लिए अपवाद ही होगा)।

उपर्युक्त नियमों के लिए दो अपवाद हैं :—

(१) दोनो चक्रों के बीचोबीच यदि स्प्रिंग की योजना की गई हो। और

(२) माल में राल लगाई गई हो।

उपर्युक्त यंत्र शास्त्र में दिये गये नियमो का पालन कड़ाई के साथ करना ही चाहिए, ऐसा नहीं है।

गति चक्र का मुख्य काम यह है कि वह एक चक्र से गति लेकर दूसरे चक्र को गति देता है और उसे परिवर्तित करता है। इसलिए उसे हल्का होना स्वभावतः आवश्यक है। हवा से उसका विरोध जितना ही कम हो सके होना चाहिए। यदि वह भारी होगा तो गति लेना व गति देना दोनों काम कठिन होगा। तथा मुख्य चक्र को भी उसके लिये गति देना मुश्किल होगा। यह चक्र जितना हलका होगा उतना ही अधिक कार्यक्षम होगा।

गति चक्र जिस बेअरिंग में घूमता है वह खरादा हुआ हो; और गति चक्र की धुरी और बेअरिंग के बीच में जगह नहीं रहनी चाहिए। ऐसी अन्तर वाली जगह रहने से आँस (धुरी)

और बेअरिंग में अनियमित घर्षण बढ़ेगा और अपना उद्देश्य पूरा नहीं होगा।

गति चक्र द्वारा प्रत्यक्ष कार्य की अपेक्षा नहीं की जा सकती। तकुए पर सूत कातने की प्रत्यक्ष क्रिया होती रहती है। तकुए को अधिक गति देने का काम गतिचक्र करता रहता है। इसीलिए गति चक्र का काम एक प्रकार से अप्रत्यक्ष स्वरूप का है। इसलिए उसमें फिसलन का प्रमाण जितना कम किया जा सके उतना ही कम करना आवश्यक है। गति चक्र पर दो माले घूमती हैं। इसमें से यदि प्रत्येक माल फिसलने लगे तो गति चक्र पर दुहरी फिसलन आयेगी और इसका असर घिर्री पर होगा। इसलिए गति चक्र के अन्दर उसकी परिधि पर फिरनेवाली माल की खाँच V आकार की ही होनी चाहिए। तथा उसमें लगनेवाली माल उतनी ही मोटी हो जो उसमें आसानी से बैठ सके। माल इस तरह लगाने का यही उद्देश्य सामने रखें कि फिसलन न बढ़ने पाये।

गति चक्र में दो चक्रों का एक दूसरे का अनुपात बढ़ाने से तकुए के फेरे अधिक होते हैं और इससे रँहटा या चर्खा भारी घूमने लगता है। इसके विपरीत इनका अनुपात एक दूसरे से घटा देने पर तकुए का वेग कम हो जाता है। वेग कम होने से घर्षण कम होता है और इसी अनुपात से चर्खा हलका घूमने लगता है।

गति चक्र के जिन आँखों से माल घूमती है वे चिकने हों। यदि इसमें खरादते समय का खड्डा या खुरदापन होगा तो माल जल्दी टूटेगा।

गति चक्र को जोर से घूमते रहना पड़ता है इसलिए उसका इतना सधा होना बहुत जरूरी है जिसमें डग डग की हरकत न हो।

गति चक्र आगे पीछे खिसकते रहनेवाला या हिलता हुआ रखना ठीक नहीं है। उसका स्थिर रहना आवश्यक है। यदि वह स्थिर न होगा तो उसके धक्के का असर मोढ़िया में रहनेवाले तकुए पर होता रहेगा। तकुआ आगे पीछे खींचा और छोड़ा जाता रहेगा।

यरवदा और किसान चक्र में भी मुख्य चक्र हिलनेवाला और सरकनेवाला रखते हुए गति चक्र स्थिर रखना सम्भव हो तो अच्छा होगा।

सारांश:—

१—गति बढ़ानेवाले को गति चक्र कहते हैं।

२—गति चक्र हलका होना चाहिए।

३—गति चक्र का बेअरिंग फिट हो।

४—गति चक्र में फिसलन नहीं होनी चाहिए।

५—गति-चक्र में एक दूसरे का अनुपात सावली चक्र में १:२ का होता है व यरवदा चक्र में १:४ का रहता है।

६-गति चक्र की मालों के फिरनेवाले खाँचे भीतर से चिकनी हों।

७-गति चक्र शुद्ध या सच्चा True हो।

८-गति चक्र स्थिर हो।

शिक्षकों को सूचनाः—

१-सायकिल की रचना।

२-गति का नियम।

पाठ छब्बीसवाँ

धुरी या धुरा

बहुधा सब ग्रामीण चर्खों की धुरी लकड़ी की होती है। सब पुराने चर्खे लकड़ी की धुरी वाले दिखाई देते हैं। परन्तु उनके भीतर धुरी के लिए जो लकड़ी इस्तेमाल की जाती है वह विशेष प्रकार की होती है। खैर, बबूल और शीसम इत्यादि एक तरह की सख्त और शीघ्र न घिसनेवाली लकड़ी धुरी के लिए इस्तेमाल की जाती है।

यदि धुरी लकड़ी की और बेअरिंग (आत्रनि, धुराधर) धातु का हो तो लकड़ी नर्म होने के कारण यह शीघ्र घिस जाती है।-

घर्षण की वजह से लकड़ी में कण अलग २ होकर वहाँ

की लकड़ी घिस जाती है। घर्षण होते हुए वहाँ पर जो उष्णता पैदा होती है उसी का ही परिणाम कण अलग २ होने पर होता है । इसलिए यदि धुरी और बेअरिंग दोनो लकड़ी के हो तो उनके बीच वालों का गुच्छा रखना चाहिए इससे उसकी धुरी का घर्षण बाल से होगा और बेअरिंग सुरक्षित बचा रहेगा। बालों के बदले आटा भी बेअरिंग मे डाला जाता है। परन्तु आटा घिस जाने के बाद लकड़ी के घिसने की संभावना रहती है।

आज कल सुधरे हुए चर्खों में धुरी लोहे की और बेअरिंग पीतल की इस्तेमाल की जाती है पीतल और धातुओं की तुलना में मुलायम होता है और उसके घिस जाने पर वहाँ दूसरा लगाने में सुविधा है इसलिए ऐसी योजना की गई रहती है। धुरी के लिए लोहे की अपेक्षा फौलाद इस्तेमाल करने से वह अधिक दिनों तक काम देती है।

यरवदा चक्र में और चर्खों की तरह धुरी की रचना नहीं होती। वहाँ पर धुरी जमीन से समकोण बनाती हुई खड़ी रहती है और चक्र आड़ा घूमता है। इस चक्र मे धुरी स्थिर रहती है और उसी के सहारे चक्र की नली घूमती रहती है। इस वजह से चक्र का वजन धुरी पर उतना नहीं पड़ता। माल की खिंचाव का जो असर धुरी पर होता है बस उतना ही होता है। कातनेवाले के हाथ का वजन और गति देते समय का

दाब इस चक्र पर ऊपर से पड़ता है। इस वजह से धुरी जितनी ऊपरी भाग में घिसी जाती है उतनी ही नीचे के भाग में भी घिसी जाती है। यहाँ भी लोहे की अपेक्षा फौलाद की धुरी इस्तेमाल करना अच्छा है। धुरी इतनी मोटी होनी चाहिए कि वह धुराधर में ठीक २ घूम सके। धुरी और आवनि के बीच बाल के बराबर भी अन्तर नहीं होना चाहिए। परन्तु इसका मतलब यह नहीं कि वह इतनी चुस्त बैठा दी जाय कि फिर ही न सके। चक्र के आकार और उसके वजन पर धुरी की मोटाई अवलम्बित रहती है।

सारांशः—

१-धुरी लकड़ी की हो तो धुराधर धातु का न हो।

२-धुरी फौलाद की हो और धुराधर के लिए पीतल अथवा लकड़ी उपयोग में लाई जाय।

३-खड़े चक्रवाले चर्खे की धुरी की रचना तथा पड़े चक्र वाले चर्खे की धुरी की रचना में अन्तर है।

४-धुरी और धुराधर के बीच अन्तर नहीं होना चाहिए।

५-धुरी को धुराधर की जगह खराद कर बनाना चाहिए।

शिक्षकों को सूचनाः—

१-पृथ्वी की धुरी।

पाठ सत्ताईसवाँ

पैर गुटके अथवा खुर

छोटी पिढ़ई (फरई) और बड़ी पिढ़ई के नीचे लगनेवाले, उन टुकड़ों को जिनके द्वारा चर्खा जमीन पर स्थिर रहता है पैर, गुटके अथवा खुर कहते हैं।

कातते समय चर्खे पर एक प्रकार का दबाव पड़ता रहता है। उसे आड़ा, टेढ़ा या तिरछा धक्का लगता रहता है। उस वजह से वह जमीन पर सरकने लगता है। सरकने की वजह से कातते समय की एकाग्रता भंग होती है। परन्तु गुटके लगा देने से चर्खा एक जगह स्थिर रहता है, हिलता नहीं।

खादी चक्र, मगन चक्र और किसान चक्र में चार खुर होते हैं। यरवदा चक्र में आठ खुर होते हैं। ग्राम चक्र के समान तीन, खुरों का चर्खा बनाना भी सम्भव है।

तीन खुरोंवाला चर्खा आसानी से जमीन की सतह पर जम जाता है। परन्तु चार खुरवाले चर्खे के लिए बराबर सतह मिलना थोड़ा कठिन होता है।

जमीन की बराबर सतह ढूंढ़ कर स्थिर करनेका काम खुर करते हैं। चर्खे के अनुसार उसका खुर लम्बा चौड़ा रखते हैं।

पाठ अट्ठाईसवाँ

हत्था, चलौना, मूठ, या घुमौना

मुख्य चक्र को घुमाने, चलाने या गति देने का काम इसी हत्थे के द्वारा होने से इसे घुमौना, चलौना अथवा हत्था या हतकी भी कहते हैं। अंग्रेजी में इसे हैन्डिल कहते हैं। जहाँ कहीं उस मुख्य चक्र को पैर से गति देते हैं वहाँ उसे पैडिल अथवा पायदान कहते हैं।

हत्था एक प्रकार की तरफ (?) है। तरफ के तत्व की सहायता ले कर हाथ से बड़े से बड़े भारी यंत्रों के चक्र भी घुमाये जाते हैं।

चलौने के फार्म की पूर्ण कल्पना कर सकने के लिए हमें सर्व प्रथम बारडोली पद्धति व सावली पद्धति के चर्खे पर विचार करना चाहिए।

बारडोली चर्खे का चक्र २७" व्यास का तथा सावली चक्र का व्यास १५" है। दोनों खड़े रहनेवाले चक्र हैं। परन्तु दोनों के हत्थों या चलौने के आकार में अन्तर है। बारडोली चक्र की धुरी पर लगाये जानेवाले चलौने की लम्बाई १। से १॥ फीट की गोल रूलनुमा लकड़ी के समान होती है और वह धुरी पर एक ओर लम्बा और दूसरी ओर छोटा रख कर

बैठाया जाता है। छोटे भाग का सिरा तोते के मुंह के समान आकार का होता है। सावली चक्र के हत्थे या चलौने को वागी कहते हैं। इसकी कुल लम्बाई ६" होती है। उसमें एक छेद बना होता है। उस छेद में एक लकड़ी डाल कर जो आसानी से उसमें घूम सकती हो, उस लकड़ी के द्वारा चक्र को फिराने का प्रबन्ध किया गया रहता है।

किसी भी चर्खे पर चलौने को ज्यों ज्यो धुरी के निकट पकड़ कर गति दी जाय त्यों त्यों चर्खा भी भारी चलेगा। और धुरी से ज्यों २ अधिक दूरी पर पकड़ कर गति दें तो चर्खा वैसे ही वैसे हलका घूमता है। धुरी के नजदीक चलौने को पकड़ कर गति देने से अधिक परिश्रम करना पड़ता है। परन्तु चलौने को धुरी से दूर पकड़ कर फिराने से हाथ के घूमने का घेरा भी बड़ा होता है जिसकी वजह से बाँह शीघ्र दुखने लगती है। इसलिये चलौने की लम्बाई में एक ऐसी जगह निश्चित कर छेद करना चाहिए जहाँ पकड़ कर चलाने से न तो हाथ को ही अधिक श्रम पड़े न बड़ा घेरा लेकर फिराने के कारण हाथ में थकावट ही होवे।

यह स्थान दोनों प्रकार के चर्खों के हत्थे या चलौने में ३॥" से ४" की दूरी पर पड़ता है। धुरी के मध्य विन्दु से लेकर चलौने की लम्बाई में ३॥" से ४" की दूरी पर पकड़ कर चक्र घुमाते रहना सुविधाजनक होता है। सावली चक्र में

तिकोनी लकड़ी का टुकड़ा चलौने की जगह काम में लाया जा रहा है। यरवदा चक्र में मुख्य चक्र की रचना आटे की चक्की के समान होती है। और चक्की के ऊपरी पलड़े की पीठ पर जिस प्रकार से परिधि के निकट खूंटा लगा होता है उसी तरह इसका चलौना भी परिधि के निकट बैठाया हुआ रहता है। परिधि के पास से निकाल कर उसे चक्र की धुरी के पड़ोस में लगा देने से चक्र घुमाना भारी मालूम होता है। इसकी मूठ या चलौना स्थिर रूप से पक्का नहीं बैठाया जाता बल्कि एक पेंच के द्वारा लगा कर घूमता हुआ रखा जाता है। इस वजह से मूठ या चलौने को पक्के तौर से हाथ में पकड़ कर घुमाया जाता है। मुख्य चक्र में खड़े तन्तुओं की ओर मूठ नहीं लगाते हैं। ऐसा करने से खड़े तन्तुओं पर पड़े हुए मूठ के छेद की वजह से चक्र के फूट जाने की सम्भावना रहती है।

यरवदा, सावली या बारडोली चक्र के व्यास एक दूसरे से कम वेस हैं, तो भी उनमें जो हत्थे या चलौने बैठाये गये हैं, उन पर चक्र को घुमाने के लिए शक्ति लगाने का स्थान उनमें से प्रत्येक के मध्य बिन्दु से लगभग समान अन्तर पर ही है। इसका कारण यह है कि व्यास में अन्तर होने पर भी इन तीनों चर्खों के मुख्य चक्रों में से प्रत्येक में चरखी के फेरे की संख्या करीब २ बराबर ही है। अर्थात् तीनों चक्रों की शक्ति लगभग बराबर ही है। यह शक्ति जितनी अधिक होगी उसी उसी के प्रमाण या अनुपात से अन्तर बढ़ाना पड़ता है और

वह जैसे कम होता है उसी के अनुसार अन्तर कम करना पड़ता है।

हाथ से ही चर्खा चलाना या फिराना पड़ता है। इस लिए चलानेवाले साधन का नाम हत्था या चलौना पड़ा है। जहाँ पर पैर से चक्र घुमाया जाता है वहाँ उसे पायदान कहते हैं। इसकी आकृति भिन्न प्रकार की होती है। मगन चक्र में पायदान होता है और पैर से ही चक्र को गति दी जाती है। पायदान पर जोर देने से एक डंडे के सहारे से चक्र घूमता है (मूल मगन चर्खे की पद्धति में जुड़े हुए सीधे डंडे की मदद से चक्र घूमता है जिस तरह कि सिलाई की मशीन में पायदान के डंडे के द्वारा मशीन चलने लगती है। अहमदाबाद वाले मगन चक्र में घुमाने के लिए पायदान का प्रबन्ध सायकिल के पायदान की तरह किया गया है।) यह डंडा सावली चक्र में हाथ से पकड़ी जानेवाली लकड़ी का ही काम देता है। इस चर्खे में चक्र को प्रत्यक्ष गति देनेवाला धुरी का मोड़ा गया भाग ही होता है। दूसरे खड़े चर्खों में हत्था या चलौना धुरी में लगाया हुआ है। परन्तु मगन चक्र में धुरी को मोड़ कर ही यह काम लिया जाता है। अर्थात् इस मोड़े हुए भाग की लम्बाई पर ही चर्खे का भारी या हल्का घूमना निर्भर रहता है। यहाँ भी तरफी (?) का ही उपयोग होता है। यह मोड़ा गया भाग यदि लम्बा रखा जाय तो इससे पायदान आवश्यकता से अधिक ऊपर नीचे होता रहेगा जिससे पैरों में अधिक तकलीफ होगी। अगर

यह लम्बाई कम रखें तो इससे चक्र बहुत भारी घूमता है। अतः इस मोड़े हुए भाग की लम्बाई—अर्थात् धुरी के मध्य बिन्दु से चक्र को गति देने के लिए शक्ति लगाने का स्थान—१।" होती है।

सारांशः—

१—चक्र को हाथ से गति देने पर गति देनेवाले साधन को हत्था या चलौना कहते हैं।

२—पैर से गति देनेवाले साधन को पायदान कहते हैं।

३—गति देने का स्थान यदि धुरी के मध्य बिन्दु के समीप आता जाय तो चक्र भारी घूमने लगता है और यदि वह दूर होता जाय तो चक्र हल्का घूमता है।

४—गति देने का स्थान यदि धुरी के मध्य बिन्दु से दूर होता जाय तो हाथ घुमाने का घेरा बड़ा होगा और इस वजह से बाँहे शीघ्र थक जायँगी।

५—यही कष्ट पायदान चलाने में पैरों की पिंडली को होता है।

६—बारडोली, सावली, यरवदा व मगन चर्खे में हत्थे (चलौने) और पायदान की रचना भिन्न २ है।

७—हाथ से चक्र घुमाते समय हत्थे या चलौने पर लगभग ३।। इञ्च से ४ इञ्च पर गति देने का स्थान होता है।

८—मगन चर्खे में चक्र की धुरी मोड़ कर ही हत्थे का काम लिया जाता है।

वही स्थान धुराधर हो जायेगा। सादी चर्खे में तकुआ चमरख के छेद में फिरता है। वहाँ तकुवा ही धुरा और चमरख धुराधर कहलायेगा। चर्खे का चक्र जिस आधार पर घूमता है उसे धुराधर कहते हैं। संक्षेप में धुरा को जो धारण करता है या धुरा जिसके आधार पर रहता है उसे धुराधर कहते हैं।

यंत्र शास्त्र में प्रमुख तीन प्रकार के धुराधर होते हैं (१) सादे धुराधर (२) रोलर धुराधर व (३) छर्रे के धुराधर। अपने कातने बुनने के औजारों में सादे धुराधर ही अधिक प्रमाण में उपयोग में लाये जाते हैं। कहीं २ छर्रे के धुराधर आज कल के सुधरे हुए साधनों में इस्तेमाल किये हुए दिखाई देते हैं। परन्तु वह क्वचित ही।

छर्रों के धुराधर से साधन अत्यन्त हल्के घूमते हैं। उसकी अपेक्षा रोलर पद्धति में साधन भारी घूमता है। और उसकी अपेक्षा सादा धुराधर रखने से और भी भारी घूमता है।

चर्खे में छर्रों का धुराधर नहीं इस्तेमाल करते हैं; बल्कि सादे ही से काम लिया जाता है। इसका कारण यह है कि कातते समय हर तीन चार फेरे घुमाने के बाद कुछ रुकना पड़ता है और फिर थोड़ा सा उलटा घुमा कर सूत लपेटने के बाद तुरन्त गतिपूर्वक कातना पड़ता है। यदि चक्र को एक ही दिशा में फिराना होता तो छर्रों का धुराधर फायदेमंद होता और ऐसी अवस्था में चक्र घुमाते रहना बड़ा सरल होता।

३०-धुराधर, आस्तनी अथवा साली

परन्तु यदि चक्र बार २ रोकना पड़ता है तो ऐसी अवस्था में छर्रों का धुराधर बहुत कष्टदायक होता है। क्योंकि गति के साथ चलते हुए चक्रों को जो कि छर्रों के धुराधर पर चलते हैं, एकाएक रोकने में काफी शक्ति लगानी पड़ती है। धुरी और धुराधर का घर्षण जितना ही कम हो उतना ही चक्र घुमाने में हल्का होता है। इसीलिए छर्रों के धुराधर में चक्र बहुत हलका घूमता है। परन्तु अपने यहाँ के इन चर्खों में छर्रों का धुराधर उपयोगी नहीं है।

सादे धुराधर में घर्षण पानेवाला स्थान अत्यन्त चिकना हो। खुरदरा होने से रगड़ अधिक होगी और चर्खा भारी घूमने लगेगा।

धुराधर का सरल रेखा (रेखा-१) में होना आवश्यक है। ऐसा न होने से धुरी का घर्षण उसपर अनियमित रूप से होगा और इससे धुराधर शीघ्र ही खराब हो जायेगा।

धुरी और धुराधर के बीच अन्तर न हो। धुराधर का छिद्र इतना ही बड़ा हो जिसमें धुरी आसानी से घूम सके। यदि छेद बड़ा हो जायेगा तो इसमें धुरी उसमें ठक ठक करने लगेगी और यदि छोटा हो जायेगा तो धुरी लगने घूम ही न सकेगी।

धुरी की अपेक्षा धुराधर नर्म वस्तु का बनाया जाता है। धुराधर

२ नियम सादे धुराधर के लिए विशेषतः लागू हैं।

यदि लोहे का हो, तो धुरी फौलाद की होनी चाहिए। और यदि धुरी लोहे की हो तो धुराधर पीतल अथवा लकड़ी का बनाया जाना चाहिए। धुराधर की रचना इस प्रकार होनी चाहिए जो घिस जाने पर निकाल दी जा सके और उसकी जगह पर दूसरा लगाया जा सके। इसलिए धुराधर नर्म वस्तु की रखते हैं, क्योंकि घर्षण होते समय नर्म वस्तु पहले घिसने लग जाती है।

सारांश:—

१–धुरी के आधार को धुराधर कहते हैं।

२–चर्खे में सादे धुराधर उपयोग में लाये जाते हैं।

३–चक्र को सीधे और फिर कुछ उलटा घुमाना पड़ता है इसलिए छर्रों का धुराधर चर्खे के लिए उपयोगी नहीं है।

४–धुराधर का घर्षण होनेवाला स्थान चिकना होना चाहिए।

५–दोनों धुराधरों को एक सीधी रेखा में लाना होता है।

६–धुराधर और धुरी के बीच अड़ नहीं होना चाहिए। इसी प्रकार उसमें वह ढकोल भी नहीं होना चाहिए।

७–धुरा के लिए सख्त वस्तु उपयोग में लाई जाती है और धुराधर के लिए नर्म।

शिक्षकों को सूचना:—

१–लकड़ी व धातु के गुण विशेष। ३–घर्षण।

२–बैलगाड़ी, पानी के रहट का धुराधर।

पाठ एकत्तीसवाँ

तेल

तेल के समान त्यागी कोई भी दूसरी वस्तु नहीं है। जहाँ २ संघर्ष उत्पन्न होवे वहाँ वहाँ तेल से हानि होना रोका जा सकता है। यंत्र शास्त्र में तेल का बहुत बड़ा महत्व है। यदि तेल न हो तो घर्षण रूपी राक्षस सब यंत्रों को एक दम चट कर जाय।

तर्क शास्त्र में 'यत्र यत्र धूमस्तत्र तत्र वह्नि' के नियम के अनुसार यंत्र शास्त्र में 'जहाँ २ घर्षण वहाँ वहाँ तेल' इस प्रकार का नियम हो सकता है। जहाँ दो भाग एक दूसरे से रगड़े जाते हैं वहाँ तेल की आवश्यकता होती है नहीं तो वह भाग घिसते जाते हैं। रगड़े जानेवाले स्थान पर तेल डालने से वह स्वयं तो नष्ट हो जाता है परन्तु वस्तुओं को सुरक्षित रखता है।

लकड़ी का लकड़ी से, लकड़ी का लोहे से या अन्य धातुओं से, फौलाद का पीतल से, लोहे का लोहे से और ताम्बे का ताम्बे से घर्षण हो, तो वहाँ तेल डालने से वह भाग कम घिसता है यह तो हुई एक बात। दूसरी बात यह है कि तेल की वजह से चक्र हलका घूमता है।

(१) घर्षण पानेवाला स्थान ठंडा रहेगा।

(२) घर्पण के कारण आग नहीं पकड़ सकती।
(३) घर्पण की वजह से भाग घिसने न पाये, इस प्रकार का तेल उपयोग में लाना अच्छा होता है।

बिलकुल घरेलू तीन प्रकार के तेल पाये जाते हैं। तिल, नारियल और मिट्टी का तेल। इन तीनों तेलों के गुण दोष अलग २ हैं। चमरख में घरेलू तेलों का उपयोग ही योग्य है। तिल या इसी प्रकार के अन्य तेल गाढ़ा जरूर होते हैं। परन्तु इनमें एक दोष यह है कि घर्पण के स्थान पर उसका उपयोग करने से वहाँ कजली, मेंडी या एक प्रकार के आंजन की तरह लुगदी तैयार होती है। और यह तेल धूल तथा खरपात लपटा लेता है। मेंडी जमने से घर्षण बढ़ता है और आगे चल कर चर्खा चलने के अयोग्य हो जाता है।

दूसरा तेल नारियल का है। इससे चिकनी लुगदी नहीं बनती और स्वतः धीरे २ खतम होते हुए यंत्रों को सुरक्षित रखता है।

तीसरा तेल मिट्टी का तेल है। यह तेल चर्खे के या किसी प्रकार के घर्पण के लिए बिलकुल ही निरुपयोगी है। क्योंकि घर्पण के स्थान पर यह उष्णता को बढ़ाता है। यह तेल आग को शीघ्र पकड़ने वाला होता है और यह बहुत ही पतला भी होता है। इसलिए वह स्वतः शीघ्र ही खतम हो जाता है। यह तेल स्वतः ही उड़ भी जाता है।

इससे सब तेलों में नारियल का तेल ही सबसे अच्छा है।

३१-तेल

अनेक सुधरे हुए यंत्रों के लिए भिन्न २ प्रकार के खास तेल बनाये गये हैं। चक्रों की गति, उनके ऊपर का बोझ और उनकी धातु वगैरह बातों को ध्यान में रखते हुए भिन्न भिन्न मिश्रणों से युक्त ये तेल बनाये जाते हैं।

तेल का काम [illegible] वस्तुओं के द्वारा भी लिया जाता है। [illegible] जहाँ २ पर लकड़ी, लकड़ी से [illegible] होती है वहाँ २ [illegible] का [illegible] तेल का काम लिया जाता है। तेल की [illegible] डाल कर भी तेल का काम [illegible] और घर्षण वाले भाग तरह वह भी स्वयं समाप्त हो [illegible] और घर्षण वाले भाग की रक्षा करता है। इसी तरह तेल की जगह [illegible] के गुच्छे का उपयोग घर्षण के स्थान पर करते हैं। [illegible] का पृष्ठ भाग चिकना होता है और उसके ऊपर से फिरनेवाले भाग को घूमने में मदद मिलती है।

जहाँ घर्षण होता है वहाँ तेल डालना चाहिए, इस नियम के लिए एक अपवाद भी है। माल [illegible] पर घूमते समय उसके खाँचे को घिसती जाती है उसी प्रकार से अनाज पर से जानेवाली माल भी डोरी को घिसती हुई जाती है। अर्थात् इन स्थानों पर घर्षण होता है। परन्तु इन स्थानों पर तेल डालना उपयुक्त नहीं है। यहाँ तेल डालने पर उलटे [illegible] फिसलन बढ़ जायेगी और इससे हानि होगी। धुरी और धुरावर के बीच जिस प्रकार अधिक से अधिक फिसलन की आवश्यकता है उस तरह अनाज और माल को दोष रहा। यहाँ यदि फिसलन होगी तो चक्र घुमाने का उद्देश्य ही असफल हो जायेगा।

सारांशः—

१–सामान्यतः जहाँ दो भाग रगड़ से घूमते हैं वहाँ तेल डाला जाता है।

२–तेल के कारण घिसे जानेवाले भाग ठंडा रहते हैं और शीघ्र घिसे नहीं जाते।

३–चर्खे के लिए नारियल का तेल ही सबसे उपयुक्त है।

४–तेल का काम ज्वार के आटे और बालू से भी लिया जाता है।

५–अमाल पर और चिर्री के खाँचे पर घर्षण होते हुए भी वहाँ तेल न डाला जाय।

शिक्षकों के लिए सूचनाः—

१-अनेक प्रकार के तेल।

२–स्नेह, संघर्ष इत्यादि बातों के सम्बन्ध में।

३–तेल का उपयोग।

पाठ बत्तीसवाँ

कमान या स्प्रिंग

चक्र घुमाने की हमारी पद्धति माल की पद्धति है। इस पद्धति में फिसलन का प्रमाण अधिक होता है। यह फिसलन कम होवे इसीलिए स्प्रिंग की आवश्यकता होती है। दूसरा

एक कारण यह है कि जिन दो चक्रों के अन्तर यंत्र-शास्त्र के नियम से कम रहता है वहाँ उस कमी को पूर्ण करने के लिए कमानी या स्प्रिंग का उपयोग किया जाता है।

कमानी की सहायता से चक्रों की एक दूसरे को पकड़ने की शक्ति बढ़ती है, यानी फेरे पूर्ण रूप से होते हैं। इसी प्रकार कमानी से एक हानि भी होती है। इसकी वजह से चक्र भारी घूमने लगता है। परन्तु ऊपर लिखे दो लाभों की दृष्टि से यह हानि अत्यन्त थोड़ी होने की वजह से सहज ही सहन कर ली जाती है।

चर्खे की माल तन्तुओं की डोरी की बनी है। घर्षण और तनाव की वजह से वह निर्बल होती जाती है और चिकनाहट भी बढ़ती जाती है। उसकी लम्बाई भी बढ़ती जाती है। बढ़ी हुई लम्बाई से होनेवाली हानि कमानी की वजह से पूरी होती है। कमानी माल को सर्वदा कसे हुए रखती है। माल आगे आगे क्रमशः ढीली होती जाने से:—

१-उसकी तकुये पर की पकड़ कम होती है,
२-इससे उसके फेरे कम होने लगते हैं,
३-फेरे अनियमित होने लगते हैं।

कमानी या स्प्रिंग भिन्न २ शक्ति की बनाई जाती है। उनसे जितनी शक्ति का काम लिया जानेवाला होता है उसी अन्दाज से उसे बनाया जाता है। यरवदा चक्र में मुख्य चक्र

और गति चक्र के बीच जितनी ताकतवर कमानी लगाई गई है उतनी मोढ़िया की नहीं। इसी तरह फौलादी तार की कमानी दो प्रकार की उपयोग में लाई जाती है। एक बहिर्मुख व दूसरी अन्तर्मुख। यरवदा चक्र में गति चक्र वाली कमान बहिर्मुख और मोढ़िया वाली कमान अन्तर्मुख है। अन्तर्मुख कमानी पर तनाव पड़ने से वह लम्बी हो जाती है परन्तु तनाव के छोड़ देने के बाद पुनः जैसी की तैसी छोटी बन जाती है और बहिर्मुख कमानी को दबाव के द्वारा छोटा करने के बाद दबाव के पुनः छूटते ही वह पूर्ववत विस्तृत हो जाती है। दोनों प्रकार की कमानी का उपयोग दोनों स्थानों पर आवश्यकतानुसार किया गया है।

रूई धुनने की बाँस की कमान उपयोग में लाई जाती है। चर्खे में फौलादी तार की कमान इस्तेमाल की जाती है। घड़ी में फौलादी पट्टी की कमान तथा अन्य कामों में रबर की कमान का भी उपयोग किया जाता है। कमानी के यन्त्रों के विभिन्न भागों में अनन्त प्रकार की पाई जाती है।

सारांश:—

१—चक्र के ऊपर की [illegible] के लिए कमान का उपयोग करते हैं।

२—दोनों [illegible] कमानी की मदद से थोड़ी बहुत तंग [illegible] है।

३—अन्तर्मुख और बहिर्मुख [illegible] दो प्रकार की कमानी [illegible]

में इस्तेमाल की जाती है।

४-फौलादी तार, फौलादी पट्टी, बाँस की कमची और रबर वग़ैरह अनेक वस्तुओं की कमानी बनाई जाती है।

शिक्षकों के लिए सूचनाः—

१-फौलाद, रबर, बाँस, इत्यादि की जानकारी।

पाठ तेंतीसवाँ

अटेरन और परेता

जिस स्वतः स्थिर रहनेवाले साधन पर तकली या तकुये में भरा हुआ सूत उतारा जाता है उसे अटेरन कहते हैं।

तकली या तकुये को स्थिर रखते हुए जिस साधन पर उतारा जाता है उसे परेता कहते हैं।

निम्न प्रकार के अटेरन देखने में आते हैं:—

(१) जमीन में कुछ अन्तर पर खूंटे गाड़ कर तैयार किया गया।

(२) एक लम्बी लकड़ी की पट्टी पर ऊपर की भाँति दो खूंटियाँ ठोक कर तैयार किये गये।

(३) लकड़ी की चौड़ी पट्टी लेकर बनाया हुआ।

(४) लकड़ी की [illegible] पर खूंटी ठोक कर बनाया हुआ।

निम्न प्रकार के परेते पाये जाते हैं:—

(१) चक्र परेता—यरवदा चक्र में गति चक्र पर रख कर जमीन से समानान्तर घूमता हुआ रख कर सूत उतारना।

(२) धुरी परेता—सावली चर्खे या अन्य चर्खों की धुरी पर पक्के तौर से बैठा कर चक्र के साथ घूमता हुआ रख कर सूत उतारना।

(३) खड़ा धुरी परेता—अपनी ही धुरी पर जमीन पर खड़ा रहते हुए घूमने वाला और सूत उतारने वाला।

अटेरन और परेते पर जो सूत उतारा जाता है उसकी परिधि भी भिन्न २ लम्बाई की होती है।

(१) एक फुट लम्बी लकड़ी की चौड़ी पट्टी वाले अटेरने पर उतारे गये सूत की फांस की परिधि दो फीट होती है। इसी अटेरन पर एक विशिष्ट पद्धति से सूत उतारने से चार फीट परिधि का फाँसा भी तैयार होता है।

(२) तीन फीट घेरे का धुरीपरेता छोटे चक्र वाले चर्खे पर इस्तेमाल किया जाता है। उसके ऊपर के फाँस की परिधि १ गज होती है।

(३) चक्र परेता ४ फीट घेरे का होता है उसके ऊपरवाले फाँस की परिधि का घेरा १ तार यानी ४ फीट होता है।

परेते का हर एक जोड़ कसकर जोड़े गये हों। वह तुरत या कुछ देर बाद ढीले हो जाने योग्य न हों। परेते या अटेरन पर जहाँ सूत उतारा जाता है वह भाग चिकना होना चाहिए। खुरदरा होने से वहाँ सूत अटकता रहेगा और टूटता रहेगा। गुंडी पूर्ण हो जाने के बाद उसे अलग निकालने में सुविधा हो इसलिए पट्टियों को जरा सा बाहर की ओर से उतार रखा जाय।

अटेरन की आवश्यकता तकली की नाक की वजह से उत्पन्न होती है। तकली में नाक न रहे या उसे निकाल लिया जा सके तो अटेरन की आवश्यकता नहीं होगी। तब सूत परेते पर उतारा जा सकता है। परन्तु तकली की नाक चौड़ी और खाँचेदार होने से अटेरन के सिवा काम नहीं चलता।

अटेरन का काम दूसरी भी तरह से निभाया जा सकता है। (१) सादी तख्ती का टुकड़ा (२) पैर के अंगूठे और हाथ की उँगलियों के बीच के अन्तर आदि। परन्तु इन तरीकों से सूत उतारने में सूत के घेरे की परिधि निश्चित और समान रहेगी ही ऐसी बात नहीं है। इसमें धागा छोटा बड़ा हो जाने की अधिक सम्भावना है।

चक्र परेता, धुरी परेता, तकली का रन्द्रा किया हुआ चौड़ी पट्टी का अटेरन इत्यादि साधन ही आज कल सूत उतारने के लिए अधिक प्रचारित हैं।

इनके नाम निम्न प्रकार हैं:—

१—एक तार परिधि का चक्र परेता:—१" चौड़ी $\frac{3}{8}$" मोटी और १६.६७" लम्बी पट्टियों का क्रास Cross नुमा रहता है।

२—एक गज परिधि का धुरी परेता:—१" चौड़ी $\frac{3}{8}$" मोटी व १३.७२" लम्बी ऐसी लकड़ी की दो पट्टियाँ क्रासनुमा रहती है।

३—रन्दा की हुई लकड़ी की पट्टी का अटेरन:—११" लम्बी ३ इञ्च चौड़ी और $\frac{1}{8}$" मोटी पट्टी का होता है।

लकड़ी की पट्टी का अटेरन सब तरफ चिकना होता है, क्योंकि उसके सब अंगों से सूत स्पर्श करता है। उसके जिन भागों पर सूत उतारा जाता है वे दोनों सिरे दोनों ओर उतार लिए हुए बनाये जाते हैं। जहाँ पर कोण न रख कर गोलाकार बना दिया जाता है।

परेता बनवाते समय उसका कर्ण बिलकुल ठीक रखना पड़ता है। समकोण त्रिभुज के कर्ण निकालने की पद्धति से परेते का कर्ण निकाला जाता है। त्रिकोण की प्रत्येक भुजाका वर्ग करके उनको जोड़ ले और उनके योग का वर्गमूल निकालें। इससे जो संख्या निकलेगी वह त्रिकोण के कर्ण की लम्बाई होगी। उदाहरणार्थ:—

१ तार परिधि का परेता लें। इसके त्रिकोण में एक भाग १२" लम्बा होगा और दूसरा भी इतना ही यानी १२" होगा।

अर्थात् १२" का वर्ग=१४४+दूसरे भाग का वर्ग १४४ =२८८ हुआ इस योग का वर्गमूल १६.९७ आता है। यानी १६.९७" लम्बाई कर्ण की हुई। कर्ण की लम्बाई के बराबर पट्टी लेकर बनाने से परेता उचित माप का बनेगा।

खड़ा धुरी परेता की अपेक्षा धुरी परेते पर सूत शीघ्र उतारा जाता है। और धुरी परेता की अपेक्षा चक्र परेते पर सूत उतारने की गति अधिक आती है। सूत उतारने का समय सब से अधिक प्रमाण में चक्र परेते पर ही बचता है।

सारांशः—

१-तकुये अथवा तकली पर से सूत उतारते समय जो साधन स्वयं स्थिर रहता है उसे अटेरन कहते हैं।

२-जो साधन तकुआ या तकली स्थिर रख कर सूत उतारते समय स्वयं ही घूमता है उसे परेता कहते हैं।

३-२ फीट व ३ फीट व ४ फीट परिधि का फाँसा अटेरन और परेते पर उतारा जाता है।

४-परेते पर जहाँ सूत उतारा जाता है वह भाग चिकना रखना पड़ता है।

५-अटेरन का सम्पूर्ण भाग चिकना रखना पड़ता है।

६–चक्र परेता, धुरी परेता, व रन्दा किये हुए लकड़ी की पट्टी का अटेरन अधिक संख्या में प्रचारित हैं।

७–[{समकोण त्रिभुज के एक भाग का वर्ग} + {समकोण त्रिभुज के दूसरे भाग का वर्ग}] $\sqrt{\ }$ = समकोण त्रिभुज के कर्ण की लम्बाई।

शिक्षकों के लिए सूचना:—

१–भूमिति।

२–वर्गमूल।

पाठ चौंतीसवाँ

चर्खे में तकुये का योग्य स्थान

चर्खे में तकुआ लगाने का स्थान चूक जाने से चर्खा भारी घूमने लगता है। यदि उसका योग्य स्थान प्राप्त हो जाय तो इससे चर्खा खूब हल्का घूमने लगता है।

चक्र पर से तकुये पर आनेवाली माल को यदि किसी भी दबाव के कारण उसकी स्वाभाविक दिशा छुड़ा कर घुमाने लगें तो वह अपने स्वाभाविक स्थान पर आने की बराबर कोशिश करती है। उसके इस स्वाभाविक प्रयत्न का यदि विरोध होता है तो इससे घर्षण बढ़ता है। चिर्री के खाँचे में

हो कर ही उसे घुमाया जाता है। इससे उसके स्वाभाविक दिशा में आने का प्रयत्न अपेक्षित दिशा में चिर्री पर दबाव देते हुए शुरू हो जाता है। चिर्री के खाँचे के भीतर कातने वाले की ओर पड़नेवाला यह दबाव मणी पर प्रत्यक्ष रूप से पड़ता है और मणि और कंठी का चमरख से घर्षण बढ़ जाता है। यह घर्षण जितने अधिक प्रमाण में बढ़ता है उतना ही चर्खा भारी घूमने लगता है।

मणि या कंठी लगाकर या चिर्री की खाँचा रूपी दीवार खड़ी करके माल को जबरदस्ती से अयोग्य स्थान पर चलाने का प्रयत्न किया जाता है तो माल अन्त तक उसका प्रतीकार करती है। अतः बिलकुल ही दबाव न पड़ते हुए माल स्वाभाविक दिशा से घूमती रहे, ऐसा प्रबन्ध करना आवश्यक है। इस प्रकार से जो स्थान आवेगा वही तकुये के फिरने का स्वाभाविक स्थान होता है। तकुयें का यह स्वाभाविक स्थान अथवा उसके ठहरने का यह विशिष्ट स्थान मोढ़िया से चमरख को आगे पीछे सरकाने योग्य या हटाने योग्य बनाने से तुरत ही ढूंढ़ा जा सकता है। ऐसे ही यदि मोढ़िया भी आगे पीछे सरकने योग्य या अगल बगल में कुछ झुका देने योग्य हो तो और भी सुविधा होती है।

(१) माल यदि मोढ़िया के फिरनी के पास वाले खम्भे की ओर आती हो तो उस खम्भे में लगे हुए चमरख को आगे सरका कर उसकी स्वाभाविक दिशा ढूंढ ली जाती है।

(२) आगे पीछे सरकने वाला मोढ़िया आगे सरका देने से घिर्री फिरकी के पास वाले खम्भे की ओर आयेगी और इस प्रकार से माल की स्वाभाविक दिशा प्राप्त हो जायेगी।

(३) अगल बगल में मुड़नेवाला मोढ़िया अपनी ओर झुकाने से घिर्री फिरकी के पासवाले खम्भे की ओर झुकेगी और इसी प्रकार से तकुये का योग्य स्थान मिल जायेगा।

सावली की ओर तकुए को मोढ़िया मे तिरछा लगा कर कातने की पुरानी प्रथा है। तिरछा तकुआ रखने से निम्नांकित चार लाभ होते हैं।

(१) धागा कात लेने के बाद लपेटने के लिये तकुये के साथ उसे एक कोण बनाना पड़ता है। इसलिए जितने प्रमाण मे तकुआ तिरछा होगा उतने प्रमाण में कातते समय ही सूत का तकुये के साथ कोण बना रहता है। इस वजह से काता हुआ धागा तकुये पर लपेटते समय कोण बनाने का समय बचता है और कातनेवाले की गति बढ़ाने मे सहायक होता है।

(२) ऊपर लिखे कारण से, काता हुआ धागा तकुये पर लपेटते समय हाथ को ऊपर नहीं उठाना पड़ता है। इससे कातनेवाले की शक्ति बचती है और बहुत देर तक बिना थके काता जा सकता है।

(३) कातते हुए तकुये पर एकबार लपेटा हुआ सूत पुनः बाहर निकल आने की संभावना नहीं रहती।

(४) खड़े चक्र की पद्धति का चर्खा होने से तकुये की घिर्री पर की माल की पकड़ बढ़ती है। क्योंकि, चक्र और घिर्री समानान्तर न होने की वजह से घिर्री के खाँचे में दोनों पृष्ठों को माल स्पर्श करती हुई जाती है।

सावली चक्र में तकुआ जमीन से ४०° या ४५° का कोण बनाते हुए तिरछा रखा जाता है। यरवदा या किसान चक्रमें वह लगभग २०° या २२° का कोण बनाता है। कोण अधिक होने से तकुये का योग्य स्थान ढूंढ़ निकालना कुछ कठिन होता है। उसी तरह यदि कोण कम रखा जाय तो उन्हीं प्रमाण में उपर्युक्त फायदा कम मिलता है।

तकुये को मोढ़िया में चार प्रकार से लगाया जाता है।

(१) आड़ा तकुआ (जमीन से समानान्तर)

(२) तिरछा तकुआ (जमीन से ४०° या ५०° कोण बनाकर)

(३ धरणीमुखी तकुआ (जमीन से समकोण बनाते हुए)

(४) मिल में ऊर्ध्वमुखी तकुआ (,,)

चारों प्रकार में उसका योग्य स्थान प्राप्त करना अर्थात् माल की उस पर से स्वाभाविक दिशा जान लेना संभव होता है। यह ठिकाव जब ठीक २ सध जाता है तो चर्खा एक दम हल्का घूमने लगता है।

सारांशः—

१–चक्र के ऊपर से घूमनेवाली माल की एक स्वाभाविक दिशा होती है।

२–माल यदि स्वाभाविक दिशा से घूमती है तो तकुये का यही टिकाव उपयुक्त होता है।

३–तकुये का टिकाव चूक जाने से चर्खा भारी घूमने लगता है और यदि वह ठीक तौर से मिल गया तो चर्खा हल्का घूमता है।

४–आड़ा, तिरछा, धरणीमुखी तथा ऊर्ध्वमुखी तकुआ रख कर भी उससे काम लिया जाता है।

५–तिरछे तकुये से मुख्यतः चार फायदे होते हैं।

(१) श्रम की बचत (२) एकबार लपेटा गया सूत पुनः बाहर उभड़ आने की कम सम्भावना। (३) समय की बचत। (४) माल की घिर्री पर की पकड़ प्रमाण में अधिक होती है।

शिक्षकों को सूचनाः—

१–पानी निकालने का चक्र और उसपर लगनेवाली डोर।

२–माल की सहज दिशा और तकुये का सहज स्थान।

३–मिलों में कताई का काम।

पाठ पैंतीसवाँ

तकुये का फेरा

मुख्य चक्र के एक फेरे में होनेवाले तकुये के फेरे की संख्या को फेरा या Revolutions कहते हैं। मुख्य चक्र के एक वार घूमने में माल की सहायता से तकुये के कितने फेरे होंगे यह निश्चित करना थोड़ा कठिन है।

तकुये के फेरे चर्खे में कितने होंगे यह ठहराने के लिए रुई की जात, धुनाई, सूत का अंक, व चक्र में फिसलन आदि बातों का विचार कातनेवाले को करना पड़ता है। जो रुई उपयोग में लाई जाती है वह उस अंक के सूत के लिए उपयुक्त होती है। योग्य अंक के सूत के लिए योग्य रुई उपयोग में न लाने पर और तकुये का फेरा अधिक नहीं होने पर सूत टूटता रहता है। साधारणतः निम्न प्रकार की जातियों की रुई आगे दिये अंको के लिए उपयुक्त होती है:—

रुई की जात	सूत का अंक
रोझिया	१२ अंक तक
व्हेरम	१६से३० अंक तक
नवसारी	१६से३० अंक तक
जयवंती	१६से३० अंक तक
बर्नी	२० अंक तक

यदि रुई उत्तम जाति की ली गई हो तो उसकी धुनाई उत्तम होना आवश्यक है क्योंकि उसी पर कताई निर्भर है। धुनाई खराब होने से तकुये का फेरा योग्य

होते हुए भी सूत टूटता रहेगा।

सूत का अंक जैसे जैसे बढ़ता जायेगा, उसी प्रमाण से तकुये का फेरा भी अधिक बढ़ाना पड़ता है तथा वह जैसे जैसे कम होता है उसी प्रकार फेरे भी कम होते जाते हैं। इस का एकमात्र कारण यह कला ही है कि जैसे जैसे बट या ऐंठन आता जाय वैसे वैसे तन्तु छोड़ता जाय। परन्तु इसकी मर्यादा भी निश्चित ही है। धागे में तन्तुओं के पिरोने की गति बहुधा लगभग समान ही रहती हैं। परन्तु सूत के अंकों के बटों में फरक होता है। जैसे जैसे अंक बढ़ता जाता है वैसे वैसे अधिक बट देना पड़ता है। इसलिए बारिक सूत के लिए तकुये का फेरा अधिक रखना पड़ता है। कातने की गति ३०० तार रख कर ९ अंक का सूत कातनेके लिए जो फेरे लगेंगे उसकी अपेक्षा उतनी ही गति से ३६ अंक का सूत कातने के लिए तकुये का फेरा अधिक लगेगा। क्योंकि ९ अंक के सूत के बट की अपेक्षा ३६ अंक के सूत में अधिक बट होता है।

तकुये के फेरे और सूत का बट ये दोनों एक ही हैं। तकुआ एकबार घूमा अर्थात् सूत में एकबार या ऐंठन चढ़ा ऐसा माना जाता है। इसलिए बट पर फेरे का प्रमाण अवलम्बित रहता है।

सूत के अङ्क का वर्गमूल × ३॥ = उस अङ्क के १ इंच सूत ताने के लिए आवश्यक बट।

सूत के अंक का वर्गमूल ×३॥=उस अंक का ताने के लिए १ इंच सूत मे आवश्यक वट। ताने की अपेक्षा वाने के सूत में अधिक वट की आवश्यकता है।

यदि तकुये का फेरा बहुत बढ़ गया तो भी यदि चक्र मे फिसलन अधिक होती हो तो उस फेरे का उपयोग नहीं हो पाता है। इसलिए फिसलन नहीं बढ़ने देना चाहिए।

साधारणतः ऐसी एक कहावत प्रचलित है कि यदि कातने की गति बढ़ानी हो तो तकुये के फेरे को बढ़ाना चाहिए। परन्तु तकुये के फेरे की गति बढ़ाने से कातने की गति बढ़ेगी ही ऐसी बात नहीं है। एक ठहराये हुए मर्यादित कालमें काते गये सूत की लम्बाई ही कातने की गति हुई। तकुये का फेरा बढ़ाने से, चिमटी, या चिमटी से (?) जो तन्तु छोड़े जाते हैं, यह क्रिया उसी के प्रमाण से शीघ्र होती ही है ऐसी बात नहीं। तन्तु जल्द छोड़ने व न टूटते हुए कातने ही से गति बढ़ेगी। तकुये के फेरे और तन्तु छोड़ने की गति सम प्रमाण में न होने से धागा टूटता रहता है और गति कम होती है। इस लिए गति बढ़ाने के लिए तकुये का फेरा अनेक कारणों में से एक कारण है।

जिस अंक का सूत किसी गति से सदा काता जाता है उसी गति से यदि उसकी अपेक्षा बारीक सूत काता जाय तो तकुये के फेरे में बढ़ती करनी होगी। उससे मोटा सूत कातें

गति से कातने के लिए तकुये का फेरा कम करना होगा।

किस अंक के लिए तकुये का फेरा कितना रखना ठीक होगा यह प्रत्येक कातनेवाले की कला पर निर्भर है। जैसे २ घट आता जाय वैसे ही वैसे समान रूप से तन्तुओं को पिरोने की कला जिन्हें सध जायेगी उन्हें तकुये का फेरा कम या ज्यादा करने से कोई हर्ज नहीं है। नये सीखनेवालों को तकुये का फेरा कम ही लगता है। कम फेरेवाले चर्खे पर सावकाश परन्तु अटूट कातना आ जाय तब इच्छानुकूल जिसे संभाला जा सके उसी प्रमाण से फेरे में बढ़ती की जानी चाहिए।

मुख्य चक्र की त्रिज्या में घूमने वाले चक्र की त्रिज्या का भाग देने से जो भागफल आये वह मुख्य चक्र के एक फेरे में घूमनेवाले चक्र फेरे के बराबर होता है। त्रिज्या की जगह व्यास और परिधि लेने से भी उदाहरण में कोई अन्तर नहीं होगा। परन्तु यदि पहले का व्यास लिया जाय तो दूसरे का भी व्यास ही लेना चाहिए और यदि परिधि लिया जाय तो दूसरे की भी परिधि ही लेनी चाहिए। तकुये का फेरा निकालने का सूत्र निम्न प्रकार होगा :—

मुख्य चक्र की त्रिज्या ÷ घूमनेवाले चक्र की त्रिज्या = मुख्य चक्र के एक फेरे में घूमनेवाले चक्र के फेरे।

कातते हुए बीचमें ही यदि फेरे कम करनेकी आवश्यकता जान पड़े तो घिर्री के खाँचे में सूत लपेट कर उस भाग को मोटा

कर दें। इस तरह से कुछ देर तक फेरे कम फिरेंगे।

चक्र को गति देते समय शक्ति का उपयोग करना पड़ता है। तब चक्र को वेग पूर्वक गति मिलती है। इस प्रकार से चक्र को गति देने के लिए चक्र के गोलाकार में एक विशिष्ट स्थान होता है। उस स्थान पर चक्र का हत्था आने पर उसे जरा सा धक्का Push दिया जाता है। यह धक्का प्रत्येक फेरा पूरा होने पर दिया जाता है। इससे तकुये की गति में समानता नहीं रह जाती। एक सम्पूर्ण धागा कात लेने तक मुख्य चक्र के जितने फेरे होंगे उतनी ही बार ऐसे धक्के दिये जाते हैं और उसका असर तकुये के फेरे की संख्या पर होता रहता है। इस तरह जब धक्का दिया जायेगा तो तकुये का फेरा उस समय बढ़ेगा और बाद में फिर कम होता जायेगा। तकुये के फेरे में होनेवाली तबदीली तन्तु छोड़ते समय फिरकी को मालूम हो जाती है। धक्का देते हुए मुख्य चक्र को घुमा कर कातने की यदि स्वाभाविक प्रवृत्ति हो तो वह हानिप्रद है इसे अलग हटाने की आवश्यकता नहीं। तकुआ घूमते रहने पर जो आवाज होती है उसमें समानता रहे तो मानों तकुये को सम प्रमाण में फेरे मिल रहे हैं ऐसा समझना चाहिए। और यदि उस आवाज में चढ़ाव उतराव होता हो तो फेरे में कम या अधिक तबदीली हो रही है ऐसा समझना चाहिए।

सारांशः—

१–मुख्य चक्र के एक फेरे मे होनेवाले तकुये

को 'तकुये का फेरा' कहते हैं।

२–तकुये का फेरा बढ़ाने से गति बढ़ेगी ही ऐसी बात नहीं।

३–एक ठहराये हुए मर्यादित समय के बीच काते हुए सूत की लम्बाई को कातने की गति कहते हैं।

४–गति समान रखते हुए सूत के अंक में यदि हेर फेर करना हो तो तकुये के फेरे में हेर फेर करना पड़ता है।

५–सूत का बट तकुये के फेरे पर निर्भर है। तकुआ के एक बार घूमने से सूत में एक बट चढ़ा ऐसा कहा जाता है।

६–किस अंक के लिए कितना बट दिया जाय यानी तकुये के फेरे कितने हों यह कातनेवाले की कला पर निर्भर है।

७–{मुख्य चक्र की त्रिज्या} ÷ {घूमनेवाले चक्र की त्रिज्या} = मुख्य चक्र के एक फेरे में घूमनेवाले चक्र के फेरे।

८–घिर्री व खाँचे मे सूत लपेट कर भी तकुये का फेरा काम चलाऊ तौर पर कम किया जा सकता है।

९–मुख्य चक्र के गोलाकार घेरे के अन्दर एक विशिष्ट स्थान पर धक्के देते हुए कातने से तकुये के फेरे पर अनिष्ट परिणाम होता है।

शिक्षकों को सूचनाः—

१–गणित- वर्गमूल निकालना।

२–बीजगणित- समीकरण।

३-चक्रो के आपसी व्यवहारों की योजना।

पाठ छत्तीसवाँ

सावली चरखा

सावली चक्र एक ग्रामीण चक्र है। इस चक्र का मुख्य चक्र जमीन से समकोण बनाते हुए घूमता है। यदि इस चर्खे की विशेषताओं को जान लें तो इसका महत्त्व सरलता से समझा जा सकेगा। अतः सर्वप्रथम इसकी विशेषताओं को ही देखें :—

१ मुख्य चक्र का व्यास १५" है।
२ १:२ के प्रमाण या अनुपात से गति चक्र हैं।
३ इसमें स्प्रिंग लगी हुई स्थिर मोढ़िया लगा है।
४ तकुआ तिरछा रखा गया है।
५ मोढ़िया में चमरख की रचना विशेष प्रकार की है।
६ इसमें चागी या हत्था यो चलौना तथा फिराने के लिए पतली लकड़ी लगी है।
७ तीन फीट का परेता धुरी पर लगाया गया है।

इसमें से लगभग प्रत्येक के सम्बन्ध में स्वतन्त्र रूप से अलग २ विचार पिछले पाठों मे किया गया है; यहाँ पर सम्पूर्ण का विचार किया जायगा।

मुख्य चक्र १५ इंच व्यास का होते हुए भी गति चक्र बीच

मे मजीठे या मोभ पर लगाने से ३० इंच व्यास वाले चक्र के बराबर काम होता है। यदि ३० इंच व्यास का चक्र रखा जाता तो मजीठा या मोभ ४५ इंच लम्बा रखना पड़ा होता। और उससे हथ-लकड़ी का फायदा नहीं मिला होता। चक्र सुन्दर तथा छोटा नहीं बन पाता। गति चक्र की वजह से तकुये के फेरे की संख्या में वृद्धि हुई और तकुये को तिरछा रखने मे सहायता भी हुई। गति चक्र की वजह से चक्र थोड़ा भारी घुमता है। और इसी प्रमाण से हत्थे या चलौने की लकड़ी का फायदा भी कम होता है। मोढ़िया में चमरख लगे होने से माल के घिर्री पर आने की स्वाभाविक दिशा और तकुये का योग्य स्थान ढूंढ निकालने में सरलता हुई। व्यास छोटा होने की वजह से धुरी पर १ फीट परिधि का परेता ही बैठाना पड़ा है। यह समय की अनुकूलता की दृष्टि से हानि हुई है।

सावली चक्र की एक और विशेषता है अर्थात् वह घर घर बनाया जा सकता है। उसे दुरुस्त कर लेना आसान है। किसी भी ग्राम में आसानी से बन सकता है।

सामान्यतः सावली चक्र का माप नीचे लिखे अनुसार है।

१ बड़ी पिढ़ई १॥ फीट लम्बी ३ इंच चौड़ी और २ इंच मोटी
२ मजीठा या मोभ ४०″×३″×१॥″
३ छोटी पिढ़ई ६″×३″×१॥″
४ बड़े खूंट १।′×३″×१॥″ प्रत्येक, कुल २ नग।
५ पखड़ियाँ १।′×१॥।″×½″ प्रत्येक, कुल ८ नग।

६ भेजनी या मूंड़ी ४॥″×३″ मोटी गोलाई का।
७ धुरा या धुरी १॥′×⅜″ मोटी गोलाई का।
८ वागी या हत्था ६॥″×३″×१॥″
९ मोढ़िया ५″×२॥″×१″

चर्खा खरीदते समय नीचे लिखी बातों पर ध्यान देना पड़ता है।

१-बड़े खूंटे समकोण बनाते हुए सीधे हों और ढीले डाले नहीं।

२-मजीठा या मोभ बड़ी पिढ़ई और छोटी पिढ़ई से समकोण बनाते हुए हों और उनके जोड़ मजबूत हों।

३-पंखड़ियाँ ढीली ढाली नहीं।

४-धुरा या धुरी खूंटो के छेद में अत्यन्त सख्त या ढीली न हों।

५-मोढ़िया, गति चक्र तथा मुख्य चक्र एक सीध में हों।

६-गति चक्र समाहित True (सच्चा) होना चाहिये।

७-मुख्य चक्र भी True यानी समाहित व गोल हो।

८-वागी या हत्था धुरी पर कस कर चढ़ाया गया हो।

९-बाँस की चकरी इतनी सख्त न हो कि चाक ही न घूम सके।

१०-परेता योग्य परिधि का और धुरी पर कस कर बैठाया गया हो।

११-तार कड़ी परेते के नीचे योग्य स्थान पर हो।

१२-खुर समान ऊँचाई के हों।

सावली चक्र में खैर, सागौन और विवला तीन प्रकार की लकड़ियाँ इस्तेमाल में लाई जाती है। फौलाद, लोहे और बीड़ ऐसी तीन धातुयें भी भिन्न २ स्थानों पर उपयोग में लाइ जाती हैं।

सावली चर्खे की कीमत दो रुपये है।

पाठ सैंतीसवाँ

यरवदा चक्र

१–मुख्य चक्र ८″ व्यास का है।

२–मुख्य चक्र और गति चक्र जमीन से समानान्तर हैं।

३–गति चक्र में दो चक्रों का एक दूसरे के साथ १:४ का अनुपात है।

४-मुख्य चक्र और गति चक्र के बीच का अन्तर गणित के नियम की अपेक्षा कम है क्योंकि इसमें स्प्रिंग का प्रबन्ध किया गया है।

५–तकुआ जमीन से बीस अंश का कोण बनाये हुए है।

६–तकुये के फेरे सावली चक्र के बराबर ही यानी १२० के आसपास है।

७–मोढ़िया में स्प्रिंग होते हुए भी उसे आगे पीछे सरकने योग्य बनाया गया है।

८-मोढ़िया में चमरख की रचना निश्चित है उसमें कोई भी तबदीली करने लायक नहीं है।

९-परेता ४ फुट का परन्तु स्वतंत्र है। गति चक्र पर रख कर जमीन से समानान्तर घुमाने के योग्य है।

१०-सम्पूर्ण चक्र छोटा और थोड़ी जगह में रह सकने लायक है।

ऊपर लिखी प्रमुख विशेषतायें इस चर्खे की बनावट में है।

१-कमानी या स्प्रिंग की वजह से चक्र पर माल की पूर्ण पकड़ रहती है।

२-चक्र छोटा रहते हुए भी गति चक्र के कारण फेरे पूर्ण रूप मे मिलते हैं।

३-परेता घुमाने को पद्धति अधिक सरल होने की वजह से गति पूर्वक सूत उतारा जा सकता है।

४-गति चक्र आड़ा और चिर्री लगभग खड़ा रहने से चिर्री पर माल की पकड़ अच्छी रहती है।

५-काम मे कमी न लाते हुए आकार मे छोटा और सुविधा-जनक है।

ऊपर लिखे प्रमुख लाभ इस चर्खे से होते हैं। इसी प्रकार इस चर्खे में नीचे लिखे अनुसार दो चार दोष भी पाये जाते हैं :—

१-गावों मे नहीं बन सकता।

२-मोढ़िया मे आये हुए या पहले से ही मौजूद दोष कातने

वाला दूर नहीं कर सकता। बढ़ई की मदद लेनी पड़ती है। क्योंकि चमरख की रचना ही उसी प्रकार की है।

३-मोटा सूत कातते समय तकुआ चमरख से बाहर निकला करता है।

सामान्यतः यरवदा चक्र की नाप नीचे लिखे अनुसार रहती है।

१-बन्द सन्दूक की नाप १। फीट × ६॥" × ३"

२-खोले हुए सन्दूक की नाम २॥ फीट × ९॥" × १॥"

३-मुख्य चक्र ८" व्यास व ½" मोटा

४-गति चक्र ४" व्यास व ½" मोटा

५-मोढ़िया २॥" लम्बी २" चौड़ी व ½" मोटी।

६-छोटा डिब्बा ७" लम्बी × २॥" चौड़ी × १॥" खोखली प्रत्येक।

यरवदा चक्र देख कर लेते समय नीचे लिखी बातों पर ध्यान देना चाहिए।

१-रबड़ के खुर बराबर ठोके गये हों।

२-सन्दूक का जोड़नेवाला कब्जा कसा हुआ और व्यवस्थित बैठाया गया हो।

३-छोटे डिब्बो के ढक्कन, गति चक्र का ठोकर व मोढ़िया को निकालने व लगाने योग्य सुविधा हो। बिलकुल कसा हुआ तंग न हो।

४-गति चक्र और मुख्य चक्र सही या सच्चे (True) हों।

५—मूठ फिरती हुई हो, पटरी से जकड़ी हुई न हो।

६—मुख्य चक्र का खूंटा हिलता हुआ न हो।

७—चर्खे के प्रत्येक जोड़ पक्के और मजबूत हों।

८—कमानी या स्प्रिंग ठीक काम देनेवाली हो।

यरवदा चक्र की कीमत ३॥ से ४॥ रुपये तक होती है। बिना सन्दूक वाले यरवदा चक्र को किसान चक्र कहते हैं। किसान चक्र की कीमत २) होती है।

पाठ अड़तीसवाँ

मगन चर्खा

१—दो तकुओं पर दो हाथों से सूत काता जाता है।

२—पैर से गति दी जाती है।

३—मोड़ी हुई धुरी, जोड़नेवाला डंडा और पायदान की रचना सीने की मशीन की तरह होती है।

४—तकुये धरणी मुखी रहते हैं।

५—मुख्य चक्र का व्यास २० इंच रहता है।

६—मोढ़ियों में स्प्रिंग नहीं रहती है परन्तु स्प्रिंग रॉड से काम लेते हैं।

७—स्टूल ऊँचा लेना पड़ता है।

८—मुख्य चक्र खड़ा घूमता है और तकुये की घिरियाँ

आड़ा घूमती हैं।

६–धुरी के दोनों सिरों पर परेते लगे होते हैं और दोनों पर एक साथ सूत उतारा जाता है।

१०–इसकी क़ीमत १०) है।

आजकल प्रचलित मगन चर्खे की दो क़िस्मे हैं।

१–अहमदाबाद वाला—सायकिल की पैडिल की तरह पेडिल की रचना।

२–मूल का—सीने की मशीन की पद्धति की रचना।

यहाँ पर मूल पद्धति के मगन चर्खे की रचना पर ही विचार किया गया है। तकुये की वट देनेवाली नोके ज़मीन की ओर मुंह किये हुए रहती हैं और ज़मीन से ३॥ फीट ऊँचाई पर होती हैं। स्टूल पर बैठने के बाद तकुये पर वट देनेवाली नोकें कातनेवाले की आँखों के सामने आती हैं इसलिए कातते समय धागे को ज़मीन की ओर झुकाते हुए कातना पड़ता है और लपेटते समय हाथ ऊपर उठाकर तकुये पर सूत लपेटना पड़ता है। नवीन धागा कातना शुरू होते ही दोनों समय हाथ तकुये के पास से सीधे जंघे तक अपनी ओर नीचे खींचते हुए लाना पड़ता है। और बाद मे थोड़ा सा बगल मे लाना पड़ता है।

चक्र में गति देते समय मुख्य चक्र कातनेवाले की ओर आता हुआ घूमता है। चक्र दोनों घुटनों के बीच कातनेवाले

के सामने घूमता है। चक्र फिराने के लिए उसके धुरे को टेढ़ा करना पड़ता है और उस जगह पर जोड़नेवाला डंडा जुड़ा रहता है। पायदान को ऊपर नीचे हिलाने से चक्र फिरने लगता है।

मुख्य चक्र ३० इंच व्यास का रखने से तकुये का फेरा, गति चक्र न लगाते हुए भी १८० से १२५ तक मिल सकता है। गति चक्र लगाने से चर्खा भारी घूमता है व पायदान की यह तकलीफ चक्र के लिए अधिक हानिप्रद है।

मुख्य चक्र खड़ा और तकुये की घिर्रियाँ आड़ा फिरती रहती है और वह मुख्य चक्र के ठीक ऊपर ही घूमती हैं अतः माल की दिशा बदलने के लिए Spring Rod यानी स्प्रिंग लगी हुई छड़ की आवश्यकता पड़ती है। स्प्रिंग राड पर घूमने वाली घिर्रियाँ स्वतंत्र घूमती रहती हैं और उस पर से माल बल खाती हुई यानी टेढ़ी मेढ़ी होती हुई जाती है। इस छड़ में स्प्रिंग लगी होने से माल को सदा कुछ अंश में तंग रखने का काम वह करती रहती है। इसके अतिरिक्त स्प्रिंग राड को आगे पीछे सरकाने की भी गुंजाइश रहती है।

धुरी के दोनों सिरों पर दो परेते स्थिर रूपसे कस कर बिठाये हुए रहते हैं और तकुये पर से आनेवाला धागा परेते पर ठीक से लपेटा जाय इसलिए दो तार कड़ियाँ दो जगहों पर लगाई हुई रहती है। तकुये की खड़ी लम्बाई के ठीक सामने

एक दूसरे परेते पर सरल रेखा में तार कड़ियों के लिए एक लकड़ी की पट्टी मगन चक्र के मुख्य दो खम्भों पर तकुये के नीचे और परेते के ऊपर लगाई जाती है। भरे हुए तकुये पर से धागे को परेते पर जोड़ दे और उसे इन तार कड़ियों में ला कर डाल देवे। इसके बाद चक्र को घुमाने से तकुये पर का सूत अपने आप परेते पर लपेटा जाता है। तकुये पर से सूत उतारते समय चक्र पर की माल उतार देनी पड़ती है।

मुख्य चक्र के ऊपर दो माल दोनों तकुओं को घुमाती है।

धुरा के मोड़े हुए भाग की लम्बाई १॥" होती है। चौड़ाई १ इंच रहती है। लम्बाई बढ़ाने से पायदान अधिक प्रमाण में ऊपर नीचे होता रहेगा और उसे कम करने से कम प्रमाण में। पायदान यदि प्रमाण से अधिक ऊपर नीचे होगा तो इससे फिल्ली और जंघे की नसों को तकलीफ होगी और यदि वह प्रमाणापेक्षा कम ऊपर नीचे हुआ तो चर्खा भारी घूमने लगता है।

दो तकुआ होते हुए भी एक तकुआ वाले चर्खे से दूनी गति नहीं आती इसका कारण यह है कि धागा टूटने की वजह से या अन्य कारणों से एक तकुआ रोकने पर दूसरा भी रोकना ही पड़ता है। और इस तरह समय बरबाद होता है। भरे हुए तकुओं पर से सूत उतारते समय भी यही अड़चन होती है।

स्प्रिंग राड पर घूमनेवाली चिर्रियों की मोटाई जहाँ तक सम्भव हो कम ही रखी जाती है वह U आकार के खाँचेवाली होती है क्योंकि यहाँ घर्षण जितना ही कम हो उतना ही कम होने की जरूरत है। स्प्रिंग राड पर चार चिर्रियाँ घूमती हैं और उनमें से प्रत्येक जोड़ी में से दोनों चिर्रियाँ एक दूसरे के प्रतिकूल दिशा में घूमती हैं।

इस पद्धति के चर्खे में मुख्यचक्र को घुमाते समय मृत बिन्दु की अड़चन नये सीखनेवालों के लिए कष्टप्रद होती है। मृतबिन्दु पर रुकजाने पर चक्र को थोड़ी सी गति दिये बिना केवल पायदान के द्वारा वह घूम ही नहीं सकता। मृतबिन्दु पर खड़े हुए चक्र को घुमाने के लिए प्रयत्न करने पर पायदान पर कितना भी वजन डालने से भी वह नहीं घूमता। उसका मृतबिन्दु ज्यों ही खिसक जाता है त्योंही वह स्वाभाविक रूप से घूमने लगता है। धुरी का मोड़ा हुआ भाग और डंडा सम्पूर्ण गोलाकार में दो बार एक ही सीधी रेखा में आ जाते हैं। इसकी यह सरल रेखा जिन दो बिन्दुओं पर आकर सध जाती है उन्हें ही मृतबिन्दु कहते हैं। थोड़ी बहुत आदत हो जाने पर मृतबिन्दु टालते हुए स्वाभाविक रूप से कातना आ जाता है।

मगन चर्खे के चारों खुर जमीन पर टिके रहना आवश्यक है। और चर्खा ऊँचा होने की वजह से उसके लिए जमीन भी बराबर सतह की होनी चाहिए। चर्खा डगमगाते रहने से

कातनेवाला काम करते समय उन्दिग्न हो जाता है।

सामान्यतः मगन चर्खे की नाप नीचे लिखे अनुसार होती है।

१–चौकठ बाहर बाहर २॥'×१।'×६"

२–चौकठ की लकड़ी ३ इच चौड़ी और २ इंच मोटी।

३–पायदान १०"×६॥"×१"

४–खम्भा ४'×३"×२"

५–तार कड़ी की लकड़ी की पट्टी २। फीट×१"×½"

६–जोड़नेवाली डंडी तथा धुरी आधा इच चौरस लोहे की सलाई की जोड़नेवाली डंडी २०॥ इंच लम्बी और धुरा या धुरा २२ इंच लम्बी।

७–पंखड़िया ३०"×१॥"×पौन इंच।

८–मोढ़िया १२"×३"×१"।

९–स्प्रिंग राड का आधार १'×१॥"×१"

१०–स्प्रिंग राड १०" लम्बी ३ सुती मोटाई की गोल।

मगन चर्खे पर सूत कातने के लिए ७'×५॥" जगह लगती है। ऊँचाई में ४ फीट जगह की जरूरत होती है।

परिशिष्ट १
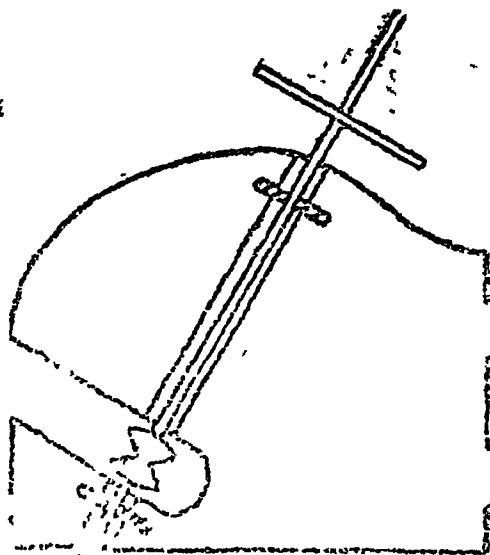
व्याख्या

१-कस या मजबूती—सूत की तनाव या घर्षण सहन करने की शक्ति सूत की मजबूती कहलाती है।

२-समानता —सूत का व्यास लम्बाई में सर्वत्र समान होना सूत की समानता कहलाती है।

३-अंक —लम्बाई और वजन के पारस्परिक सम्बन्धों को दर्शानेवाली संख्या को अंक कहते हैं।

४-कम्प —ताँत का हवा मे थरथराना कम्प कहलाता है।

५-स्वगति —ताँत का अपने चारों ओर उलटे सीधे घूमना स्वगति कहलाती है।

६-गति —(१) एक सीमित काल मर्यादा के भीतर काते गये सूत की लम्बाई को कातने की गति कहते हैं।

(२) सीमित काल मर्यादा के भीतर धुनी हुई रूई के वजन को धुनने की गति कहते हैं।

(३) सीमित कालमर्यादा के भीतर ओटी गई रूई के वजन को ओटने की गति कहते हैं।

७-वायर गेज —तार की मोटाई अथवा व्यास नापने के साधन को वायर गेज कहते हैं।

८-ओटाई —बिनौले से रूई को अलग करने की क्रिया को ओटाई कहते हैं।

९-तुनाई —कपास के तन्तुओं को अंगुलियों से सीधा करने की क्रिया को तुनाई कहते हैं।

१०-धुनाई —एक में एक उलझी और कपटी हुई रूई में तन्तुओं को अलग २ करना और स्वतन्त्र रूप से कार्यशक्तिशाली बनाना धुनाई कहलाता है।

११-कताई —तन्तुओं को एकत्र मिलाकर बट देते हुए धागा बनाने की क्रिया को कताई कहते हैं।

१२-कपास —तन्तुओं के साथ मिले हुए बिनौले को कपास कहते हैं।

१३-रूई —बिनौला निकाल देने के बाद कपास को रूई कहते हैं।

१४-पूनी —धुनी हुई रूई को (की ?) कातने की क्रिया के लिए उपयोगी होने योग्य आकार की बत्ती को पूनी कहते हैं।

१५-सूत —सूत के तन्तुओं को एकत्र बट देकर बनाये गये धागे को सूत कहते हैं।

१६–तकुये का फेरा —मुख्य चक्र के एक फेरे में तकुये के होने वाले फेरे की संख्या को तकुये का फेरा कहते हैं।

१७–सूत का बट —एक इंच लम्बाई में सूत के बट को सूत का बट कहते हैं।

परिशिष्ट २

कोष्टक

१–१६ आने अर्थात् १ तोला
५ तोले ,, १ छटांक
८ छटांक ,, आधा सेर
१६ छटांक ,, १ सेर

२– ४ फीट अर्थात् १ तार
१६० तार ,, १ लटी
४ लटी ,, १ गुण्डी

३–१२ इंच अर्थात् १ फूट
३ फीट ,, १ गज
४ फीट ,, १ तार
१६ तार ,, १ कली
१० कली ,, १ लटी
४ लटी ,, १ गुण्डी

४– ६४० तार अथवा ४० कलियाँ अथवा ४ लटी } अर्थात् १ गुण्डी

५–एक आने भर में जितने तार उतना ही सूत का अंक।

६–एक तोला भर वजन में जितनी कलियाँ होंगी उतना ही सूत का अंक होगा।

७–दो छटाक भर वजन में जितनी कब्रियाँ उतना ही उस सूत का अंक।

८–आधा सेर यानी ४० तोले में जितनी गुण्डियाँ उतना ही उस सूत का अंक।

९–(अ) $\frac{\text{अन्तर} \times १०}{\text{औसत अंक}}$ = सूत में प्रतिशत असमानता।

(आ) $\frac{\text{असमानता} \times \text{औसत अंक}}{१००}$ = अन्तर

(इ) $\frac{\text{अन्तर} \times १००}{\text{असमानता}}$ = सूत का अंक

असमानता जाँचने के लिए, लिए हुए सूत के कम से कम और अधिक से अधिक अंकों के अन्तर को 'अन्तर' कहते हैं।

१०–व्यास × २२/७ = परिधि।

११–(अ) सूत के अंक का वर्गमूल × ३॥ = गाने के एक इंच सूत में आवश्यक बट।

(आ) सूत के अंक का वर्गमूल × ३॥ = बाने के एक इंच सूत में आवश्यक बट।

१२–४० तोले अर्थात् आधा सेर
८० तोले ,, १ सेर
४० सेर ,, १ मन
२० मन ,, १ एक खण्डी

१२–सूत के अंक का वर्गमूल × २७॥ = सूत का व्यास।

परिशिष्ट ३

लकड़ी का कोष्टक

कताई धुनाई इत्यादि के लिए लगनेवाले साधनों या औजारों के प्रत्येक खुले हुए भागों अथवा सम्पूर्ण में कितने घन फीट लकड़ी लगती है उसका ऑकड़ा नीचे दिया गया है। ये सब ऑकड़े आनुमानिक हैं और ऐसे आकार की लकड़ी का हिसाब लिया गया है जो साधनों को उपयोगी सिद्ध हो।

साधनों का नाम	लकड़ी की जात	घन फूट	एक घन फूट लकड़ी का भाव
पूनी पाट(पटला,पटरा)	सागौन	१/१२	२॥)
हत्था	,,	१/२०	,,
पंखा (३॥' धुनकी का)	,,	१/२४	,,
पंखा (३' धुनकी का)	,,	१/३०	,,
मत्थेके साथ डंडा नग २ (दो धुनकियों के लिये एकत्र लेना पड़ता है इसलिए) ३॥ फुटी धुनकी के लिए।	,,	१/६	,,
३' धुनकी के लिए डंडी नग २	,,	१/१२	,,
सम्पूर्ण ३॥ फुटी धुनकी		१/१०	,, (?)

साधनों का नाम	लकड़ी की जात	घनफुट	एक घन फुट लकड़ी का भाव
सम्पूर्ण ३ फुटी धुनकी		१/६	२॥)
गोटिला ३॥ फुटी धुनकी के लिये	खैर, बबूल	१/२१६	×
गोटिला ३ फुटी धुनकी के लिए	व शीसम	१/२८८	×
मोढ़िया	सागौन	१/१४४	२॥)
अटेरन	,,	१/१७२	,,
परेता	,,	१/८०	,,
साबली चक्र का स्टैंड	,,	१/४	,,
,, ,, के दूसरे भाग	,,	१/८	,,
साबली चक्र सम्पूर्ण	,,	३/८	,,
यरवदा चक्र	,,	१/४	,,
मगन चक्र		१	,,

परिशिष्ट ४

साधनों या औजारों के नाम

कपास से ले कर सूत कातने की क्रिया तक जो औजार इस्तेमाल में लाये जाते हैं उनके तथा उनके विभिन्न भागों के नाम भी यहाँ दिये गये हैं। उसी के अनुसार संक्षेप में अर्थ भी दिया गया है।

क्रम संख्या	औजारों के नाम	लिंग	अर्थ
१	सलाई पटरी		कपास ओटने का सबसे सरल साधन।
२	चर्खी (ओटनी)		हाथ से बेलन को गति देकर कपास ओटने का साधन।
३	कण्णा		चर्खे में बारीक लोहे की सलाक।
४	लाट		चर्खी में लकड़ी का बड़ा बेलन।
५	हत्था या चलौना		चर्खीमें बेलन को घुमानेका साधन।
६	पेच		कण्णा व लाट दोनों को पकड़ने के लिए दोनों पर स्क्रू के समान बनाये गये खाँचे।
७	धुनकी		रूई धुनने का साधन।
८	पंखा		धुनकी में लगाई जानेवाली एक खास आकृति की पटरी।
९	डंडी		जिसमें पंखा लगा होता है और जिसे पकड़ कर रूई धुनी जाती है वह लम्बी डंडी।
१०	मूठ		डंडी को जिस स्थान पर पकड़ा जाता है वह गोलाकार भाग।
११	मत्था		डंडी के पंखे के विरुद्ध भाग का सिरा

क्रम संख्या	औजारों के नाम	लिंग	अर्थ
१२	अटकनी		डंडी पर लपेटी हुई तांत मत्थे पर से मोड़ कर दे जाते समय खिसक न जाय, इसके लिए ठोकी गई एक छोटी खूंटी।
१३	समतोल बिन्दु		मुट्ठी का मध्य। इस बिन्दु पर धुनकी को उठाये हुए रखने से उसके दोनों सिरों का वजन समान होता है।
१४	गोटिला		धुनने के लिए तांत पर प्रहार करने का साधन।
१५	गोटियाँ		गोटिला के दोनों सिरों के गोल भाग।
१६	छटकनी		गोटियों का वह भाग जो तांत से टकराया करता है।
१७	गोटिले की डंडी		गोटियों के बीच का पतला भाग।
१८	धनुष्य		धुनते समय धुनकी को उठाये रखने का श्रम कम हो इसलिए उपयोग में लाई जानेवाली एक धनुष्य के समान कमान।
१९	कमची		धनुष्य की बाँस की कमची।

क्रम संख्या	औजारों के नाम	लिंग	अर्थ
२०	प्रत्यंचा		कमचीमें बाँधीगई धनुष्यकी डोरी।
२१	आँत की ताँत		बकरीकी अँतड़ीसे बनाईगई डोरी।
२२	पुट्ठे की ताँत		जानवरों की पीठ पर के पुट्ठे की बनाई गई डोरी।
२३	गांठ		तांत के सिरे पर रूईके द्वारा बाँधी गई छोटी सी गाँठ।
२४	फाँसा या फंदा		पंखे पर गांठ को पकड़े रहने के लिए बनाया गया फन्दा।
२५	काँकर पट्टी		पंखे पर लगाई गई बकरी के कच्चे चमड़े की पट्टी।
२६	आत्मा		पंखे की लकड़ी और काँकर पट्टीके बीच पोपलापन निर्माण करने के लिए लगाई गई काँकर की छोटी टुकड़ी।
२७	जव्हारी		पंखे में आत्मा का योग्य स्थान। इस जगह आत्मा के आते ही आवाज मधुर निकलती है।
२८	चमड़े की पट्टी		मत्थे पर तांत का लकड़ी से घर्षण न हो इसके लिए उसमें ठोकी गई, कमाये हुए चमड़े की पट्टी।

क्रम संख्या	औजारों के नाम	लिंग	अर्थ
२९	गद्दी		मुट्ठीसे पकड़ने के लिए ताकत मिले इसके लिए मुट्ठी पर बाँधी जाने वाली छोटी सी गद्दी। इससे कलाई शीघ्र नहीं दुखती।
३०	पट्टा		गद्दी की एवजमें लगाई जाने वाल सूत की गुण्डी या लड़ी।
३१	जोती		तोल डंडी और धुनकी की डंडीको जोड़नेवाली दो रस्सियाँ।
३२	चटाई		धुनते समय जमीन पर का कचरा रूईमें न लगे इसके लिए जमीन पर बिछाई गई चटाई।
३३	सरकंडा		चटाईके लिए उपयोगमें आनेवाली एक प्रकार की घास।
३४	ढोढ़(देवनला)		चटाईके लिए उपयोगमें आनेवाली एक प्रकार की घास।
३५	पूनीपाट(पटरा)		जिस पर पोल रख कर बेला जाता है उसे पूनीपाट या पटरा कहते है।
३६	पूनी सलाई		जिसके ऊपर पूनी लपेटी जाती है उसे सलाई कहते हैं।

क्रम संख्या	औजारों के नाम	लिंग	अर्थ
३७	हत्था		जिस पटरी से पूनी दाब कर बेली जाती है उसे हत्था कहते हैं। उस में ऊपर मूठ लगी होती है।
३८	बटनी		तांत और कौंकरपट्टी को तंग करने के लिए फाँसे को तंग करनेवाली छोटी सी लकड़ी।
३९	तकली		सूत कातने का सबसे सस्ता और सब से सरल साधन।
४०	तकली की डंडी		सूत भरने के लिए तथा सूतमें बट देने के लिए लगाई गई फौलाद की बारीक सलाई।
४१	चकती		तकली की डंडी पर पायदानुमा बैठाई गई पीतल की चकरी।
४२	नाक		तकली को बट देनेवाला ऊपरी और खाँचेदार भाग या नोक।
४३	अनी		चकती के नीचे बची हुई तकली की डंडी।
४४	छाटेरन		तकली पर का सूत उतारने का साधन।
४५	राख		तकली को गति देने में उपयोग से

क्रम संख्या	औजारों के नाम	लिंग	अर्थ
			आनेवाली कोयले की चिकनी सफेद राख।
४६	पुष्टिपत्र या दफ्ती		तकली फिरते समय जिसपर टिकी हुई घूमती है वह मोटा कागज।
४७	सावली चर्खा	—	सूत कातने का ग्रामीण साधन।
४८	तुम्बा या मूंड़ी		सावली चक्रमें मुख्य चक्र की धुरी पर बिठाई गई बत्तियोंके बीच गोल लकड़ी का टुकड़ा।
४९	तार कड़ी		परेते पर परेतते समय जिसमें हो कर सूत परेते पर जाता है वह अंगूठी।
५०	पिढ़ई		सावली चक्र के खम्भे जिस पर खड़े होते हैं वह लकड़ी।
५१	खम्भे		सावली चक्र में जिनपर चक्र घूमते हैं।
५२	छोटी पिढ़ई		सावली चक्र में मोढ़िया जिस पर बिठाया जाता है वह पिढ़ई।
५३	मराठा या मोभ		बड़ी पिढ़ई और छोटी पिढ़ई को जोड़नेवाली पटरी।
५४	फान		खम्भे और पंखड़ियां एक दूसरे से

क्रम संख्या	औजारों के नाम	लिंग	अर्थ
			न लगें, इसके लिए धुरी पर बिठाये गये बाँस के अंगूठोदार टुकड़े।
५५	माचीयामचिया		सावली चक्र पर सूत कातते समय बैठने के लिए ली गई छोटी सी घोड़िया।
५६	हाथ-लकड़ी		हत्थे या चलौने में अँटका कर हाथ में पकड़ कर घुमाने की लकड़ी ॥
५७	परेता		तकुयेपर का सूत उतारनेका साधन।
५८	स्प्रिंग		गाल को तंग रखनेके लिए उपयोग में आनेवाली स्प्रिंग।
५६	तेल		घर्षणके स्थान पर डालनेकी वस्तु।
६०	धुराधरयासामी		जिनके आधार पर धुरी घुमती है।
६१	बागी, हत्था या चलौना		सावली चक्र में चक्र को घुमाने के लिए धुरीपर विठाया गया साधन।
६२	खुर		जमीन पर जिन पैरों के द्वारा चर्खा खड़ा रहता है उसे खुर कहते हैं।
६३	धुरी या धुरा		चर्खे में चक्र की धुरी।
६४	गति चक्र		तकुये की गति बढ़ानेवाला चक्र।
६५	माल		चर्खे में चक्र को घुमाने के लिए उपयोग में लाई जानेवाली डोरी।

क्रम संख्या	औजारों के नाम	लिंग	अर्थ
६६	अमाल		पंखड़ीवाले चर्खोंमें परिधि पर पंखड़ियों में बाँधी जानेवाली रस्सी या डोरी।
६७	मोढ़िया		तकुआ जिनदो खम्भोंके आधार पर घूमता है उसभागको मोढ़िया कहतेहैं
६८	मणि या कंठी		घिर्रीका लकड़ीसे घर्षण न होनेपाये इसके लिए तकुये पर लगाई जानेवाली खरही या ढोढ का टुकड़ा।
६९	चकती या फिरकी		तकुये पर सूत भरते समय धागा कुकड़ी के पीछे न जाने पाये इसके लिए बिठाई गई चकती।
७०	चमरख		तकुवा जिसमे घूमता है वह दोनों भाग।
७१	सादी		तकुआ घुमाने के लिए जिस स्थान पर माल की रगड़ होती होगी वहाँ सूत, करायल आदि वस्तु लपेटकर बनाई गई चीज।
७२	घिर्री या गरेड़ी		तकुये पर माल घूमनेके लिए बैठाई गई छोटी सी चकरी।
७३	तकुआ		सूत को बट देनेवाली सुई।

क्रम संख्या	औजारों का नाम	लिंग	अर्थ
७४	यरवदा चक्र		सन्दूक में बन्द होनेवाला शहरी चर्खा।
७५	किसान चक्र		बिना सन्दूक का यरवदा चक्र।
७६	मगन चर्खा		पैर से गति देकर दोनो हाथ से कातने का साधन।
७७	पायदान		मगनचर्खे में जिसपर पैर रख कर गति दी जाती है वह पटरी।
७८	जोड़ने वाली डंडी		पायदान और धुरी को जोड़नेवाली डंडी।
७९	स्प्रिंग राड		मगनचर्खे में मुख्य चक्र पर से तकुये पर आनेवाली माल जिस हिलती हुई सलाई पर से होकर आती है उसे स्प्रिंग राड कहते हैं।
८०	फिरती घिरी		स्प्रिंग राड या कमान सलाई पर माल की दिशा [illegible] के लिए घूमती रहने वाली घिरी।
८१	स्टूल		मगन चर्खे पर कातते समय बैठने के लिए लिया गया ऊँचा आसन या घोड़िया।

❀ समाप्त ❀

११ सितम्बर १९४४ ई० —रामनरेश सिंह

१ ली दिसम्बर १९४६ से चर्खादि सरंजामों का बिक्री दर

क्रम	सामान	दर	
१	यरवदा चक्र सादा	६)	सामान सहित
२	,, पो०	१०)	,, ,,
३	किसान चक्र	५॥)	,, ,,
४	धुनकी ३'	२)	,, ,,
५	धुनकी ३'	१॥=)	,, ,,
६	बिहार चक्र	२॥≡)॥।	,, ,,
७	चर्खी	३॥)	,, ,,
८	हाथा पाटला सेट	॥=)	,, ,,
९	सलाय बटरी सेट	॥)	,, ,,
१०	तकली	।—)	,, ,,
११	नेहाय-हथोड़ी सेट	॥)	,, ,,

अलग अलग सरंजामों की दर निम्न प्रकार है—

१	यरवदा चक्र का	परेता ...	॥)	प्रति
२	,,	तकुआ ...	।–)	,,
३	,,	चकती घा० ...	)॥	,,
४	,,	चमरख	)।	,,
५	,,	मोटा माल	)॥।	,,
६	,,	पतला माल	)।	,,
७	,,	नाभी जोड़ी ...	१)	(छोटा तथा बड़ा चक्का दोनों का)
८	,,	मोढ़िया	।=)	प्रति
९	बिहार चक्र का	तकुआ	=)॥	,,
१०	,,	चमरख	)॥	,,
११	,,	चकती टीन	)।	,,
१२	गोठिला बड़ा तथा छोटा		।)	,,
१३	काँडमोर जोड़ा		–)॥	,,
१४	ताँत लच्छी		।)॥	,,
१५	परेता बी० च०		।≡)	फोंफी सहित
१६	टुनना यंत्र		।=)	प्रति